वार्षिक रु. २००, मूल्य रु. २०

ISSN 2582-0656
9 772582 065005

विवेक ज्योति

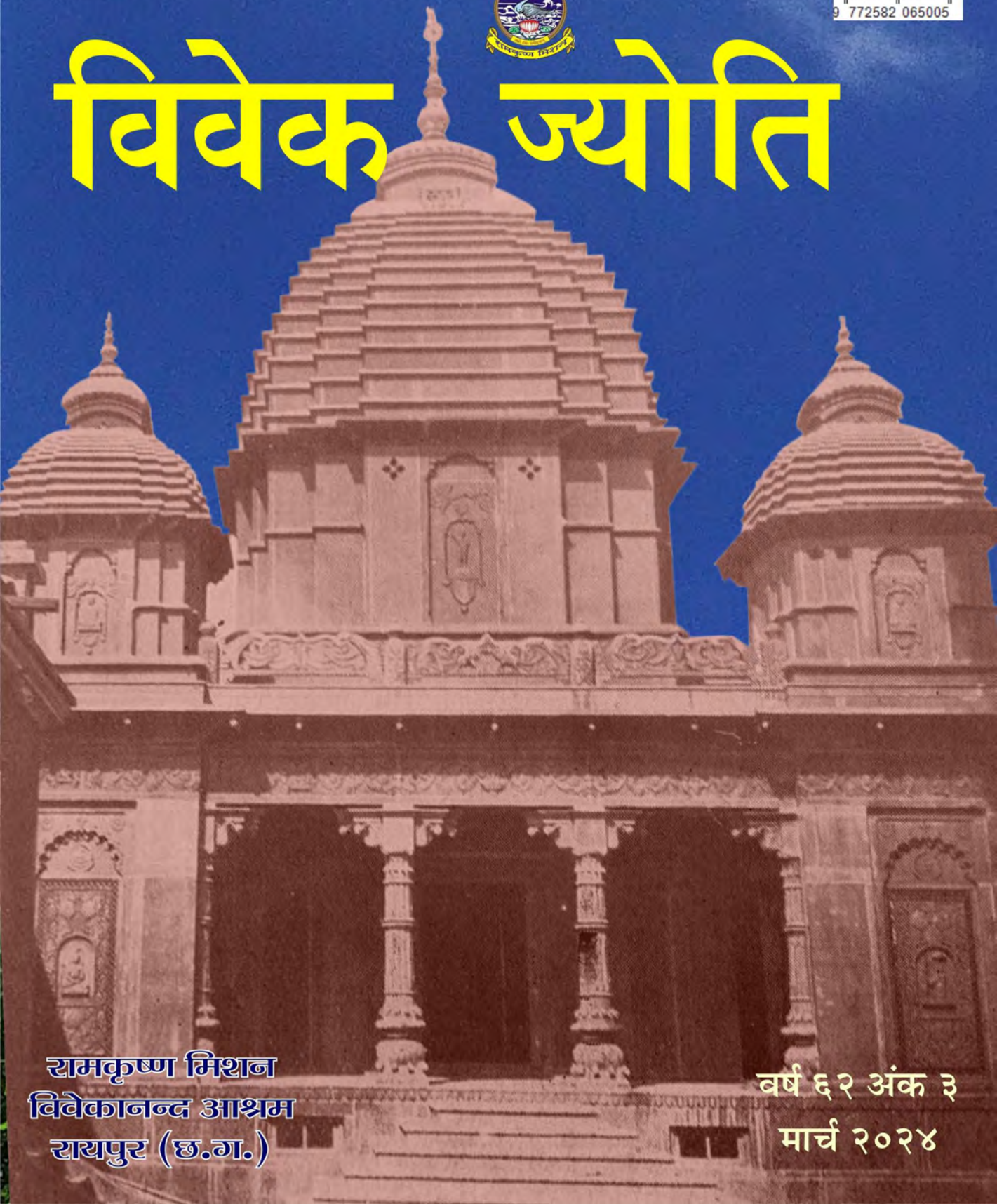

रामकृष्ण मिशन
विवेकानन्द आश्रम
रायपुर (छ.ग.)

वर्ष ६२ अंक ३
मार्च २०२४

* आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च *

वर्ष ६२

अंक ३

विवेक-ज्योति

हिन्दी मासिक

प्रबन्ध सम्पादक
स्वामी अव्ययात्मानन्द

व्यवस्थापक
स्वामी स्थिरानन्द

सम्पादक
स्वामी प्रपत्त्यानन्द

सह-सम्पादक
स्वामी पद्माक्षानन्द

फाल्गुन, सम्वत् २०८०

मार्च, २०२४

अनुक्रमणिका

* आपस में झगड़े की कोई आवश्यकता नहीं : विवेकानन्द १०२
* भारत में रामकृष्ण संघ का प्रथम मन्दिर (स्वामी अलोकानन्द) १०५
* शान्ति पाने का उपाय (स्वामी सत्यरूपानन्द) १११
* शिव-तत्त्व : एक विमर्श (स्वामी संवित् सोमगिरि) ११२
* (बच्चों का आंगन) आत्म-संघर्ष (श्रीमती मिताली सिंह) ११७
* श्रीशिवताण्डवस्तोत्रम् (श्रीरावण) ११८
* श्रीराम और श्रीरामकृष्ण (स्वामी निखिलात्मानन्द) १२०
* (युवा प्रांगण) नेतृत्व में सशक्त महिलाएँ (स्वामी गुणदानन्द) १२३
* सबकी श्रीमाँ सारदा (स्वामी चेतनानन्द) १२५
* (कविता) धन्य-धन्य अध्यात्म शिरोमणी (विजय कुमार श्रीवास्तव) १३२
* (कविता) रामकृष्ण बोलो (मोहन सिंह मनराल) १३६

शृंखलाएँ

मंगलाचरण (स्तोत्र) १०१
पुरखों की थाती १०१
सम्पादकीय १०३
रामगीता ११४
श्रीरामकृष्ण-गीता १३२
गीतातत्त्व-चिन्तन १३३
प्रश्नोपनिषद् १३६
सारगाछी की स्मृतियाँ १३७
साधुओं के पावन प्रसंग १३९
समाचार और सूचनाएँ १४१

रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर – ४९२००१ (छ.ग.)

विवेक-ज्योति दूरभाष : ***०९८२७१ ९७५३५*** (फोन करने का समय केवल सुबह १० से १२)
ई-मेल : **vivekjyotirkmraipur@gmail.com,** वेबसाइट : ***www.rkmraipur.org***
आश्रम कार्यालय : ०७७१ – २२२५२६९, ४०३६९५९ (समय : ८.३० से ११.३० और ३ से ६ बजे तक) रविवार एवं अन्य अवकाश को छोड़कर

ISSN 2582-0656

विवेक-ज्योति के सदस्य कैसे बनें

भारत में	वार्षिक	५ वर्षों के लिए	१० वर्षों के लिए
एक प्रति २०/-	२००/-	१०००/-	२०००/-
विदेशों में (हवाई डाक से)	६० यू.एस. डॉलर	३०० यू.एस. डॉलर	
संस्थाओं के लिए	२५०/-	१२५०/-	
भारत में रजिस्टर्ड पोस्ट से माँगने का शुल्क प्रति अंक अतिरिक्त ३०/- देय होगा।			

* सदस्यता-शुल्क की राशि इलेक्ट्रॉनिक या साधारण मनिआर्डर से भेजें अथवा **ऐट पार** चेक – **'रामकृष्ण मिशन'** (रायपुर, छत्तीसगढ़) के नाम बनवाकर रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम रायपुर (छ.ग.) ४९२००१ के नाम स्पीड पोस्ट से भेज दें अथवा निम्नलिखित खाते में सीधे जमा करायें :

बैंक का नाम : सेन्ट्रल बैंक ऑफ इंडिया
अकाउण्ट का नाम : रामकृष्ण मिशन, रायपुर
शाखा का नाम : विवेकानन्द आश्रम,रायपुर,छ.ग.
अकाउण्ट नम्बर : 1385116124
IFSC : CBIN0280804

मार्च माह के जयन्ती और त्यौहार

०८	शिवरात्रि
१२	श्रीरामकृष्ण देव
२५	चैतन्य महाप्रभु
२९	स्वामी योगानन्द
७,२०	एकादशी

विवेक-ज्योति कोष/स्थायी कोष

दान दाता	दान-राशि
श्री केजुराम साहू, वी.आई.पी.रोड,रायपुर(छ.ग.)	१,०००/-

लेखकों से निवेदन

सम्माननीय लेखको ! गौरवमयी भारतीय संस्कृति के संरक्षण और मानवता के सर्वांगीण विकास में राष्ट्र के सुचिन्तकों, मनीषियों और सुलेखकों का सदा अवर्णनीय योगदान रहा है। विश्वबन्धुत्व की संस्कृति की द्योतक भारतीय सभ्यता ऋषि-मुनियों के जीवन और लेखकों की महान लेखनी से संजीवित रही है। आपसे नम्र निवेदन है कि 'विवेक ज्योति' में अपने अमूल्य लेखों को भेजकर मानव-समाज को सर्वप्रकार से समुन्नत बनाने में सहयोग करें। विवेक ज्योति हेतु रचना भेजते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें –

१. धर्म, दर्शन, शिक्षा, संस्कृति तथा मानव के नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास से सम्बन्धित रचनाओं को 'विवेक-ज्योति' में स्थान दिया जाता है।, **२.** रचना बहुत लम्बी न हो। पत्रिका के दो या अधिकतम चार पृष्ठों में आ जाय। पाण्डुलिपि फूलस्केप रूल्ड कागज पर दोनों ओर यथेष्ट हाशिया छोड़कर स्पष्ट सुन्दर हस्तलेख में लिखी या टाइप की हुयी हो। आप अपनी रचना ई-मेल – vivekjyotirkmraipur@gmail.com से भी भेज सकते हैं।, **३.** लेख में आये उद्धरणों के सन्दर्भ का पूरा विवरण दें।, **४.** आपकी रचना डाक में खो भी सकती है, अत: उसकी एक प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रखें। अस्वीकृति की अवस्था में वापसी के लिये अपना पता लिखा हुआ एक लिफाफा भी भेजें।, **५.** पत्रिका हेतु कवितायें छोटी, सारगर्भित और भावपूर्ण लिखें।, **६.** 'विवेक-ज्योति' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचारों का पूरा उत्तरदायित्व लेखक का होगा और स्वीकृत रचना में सम्पादक को यथोचित संशोधन करने का पूरा अधिकार होगा। न्यायालय-क्षेत्र रायपुर (छ.ग.) होगा।, **७.** 'विवेक-ज्योति' में मौलिक और अप्रकाशित रचनाओं को ही प्राथमिकता दी जाती है, इसलिये अनुवाद न भेजें। यदि कोई विशिष्ट रचना इसके पहले किसी दूसरी पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी हो, तो उसका उल्लेख अवश्य करें।

आवरण-पृष्ठ के सम्बन्ध में

आवरण पृष्ठ पर भारत में रामकृष्ण संघ का प्रथम मन्दिर है। विस्तृत जानकारी के लिए पृष्ठ संख्या १०५ देखें।

क्रमांक	विवेक ज्योति पुस्तकालय योजना के सहयोग कर्ता	प्राप्त-कर्ता (पुस्तकालय/संस्थान)
७११.	श्री अनुराग प्रसाद (स्मृति में श्रीरामराज एवं श्रीमती उषाप्रसाद) गाजियाबाद (उ.प्र.)	शा.उ.मा. विद्यालय बावनकेरा, जिला-महासमुन्द (छ.ग.)
७१२.	,, ,,	शा.कन्या हाई स्कूल झलप, जिला - महासमुन्द (छ.ग.)
७१३.	,, ,,	शा.उ.मा. विद्यालय नखोरा, पो. नखोरा, जि.- महासमुन्द
७१४.	,, ,,	शा.उ.मा. शाला बनपचरी, वाया-पटेवा, महासमुन्द (छ.ग.)
७१५.	,, ,,	शा.उ.मा. विद्यालय सुखरी डबरी,वाया-बागबहेरा, महासमुन्द

रामकृष्ण मिशन आश्रम

एम.पी. नगर, जोन-1 भोपाल 462011

फोन - 0755-2550520, ई-मेल-bhopal@rkmm.org

रामकृष्ण मिशन आश्रम, भोपाल, मध्यप्रदेश, रामकृष्ण मिशन, बेलूड़ मठ, हावड़ा, पश्चिम बंगाल का एक शाखा केन्द्र है। आश्रम निम्नलिखित सेवा-कार्यों के लिए समर्पित है : १. आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक सेवाकार्य २. शैक्षणिक सेवाकार्य ३. चिकित्सा सेवाकार्य : फिजियोथेरेपी सेन्टर का संचालन ४. राहत एवं जन-कल्याण कार्य।

विशेष निवेदन

आश्रमवासी साधु-ब्रह्मचारियों तथा अतिथि-संन्यासियों के निवास हेतु एक उपयुक्त साधु-निवास निर्माण की आवश्यकता बहुत समय से अनुभव किया रहा था। इसी दीर्घकालीन आवश्यकता की पूर्ति हेतु आश्रम प्रबंधन ने एक साधु-निवास निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया है। इस कार्य को पूर्ण करने हेतु धन-राशि की आवश्यकता है। अत: हम संस्थाओं, व्यवसायिक प्रतिष्ठानों एवं समाज-सेवी गैर-सरकारी संस्थाओं से उदारतापूर्वक आर्थिक सहायता प्रदान करने हेतु निवेदन करते हैं। उपरोक्त महान कार्य हेतु छोटी से छोटी सहयोग राशि भी सधन्यवाद ग्रहीत एवं स्वीकृत होगी।

कृपया चेक/ड्राफ्ट (**रामकृष्ण मिशन आश्रम, भोपाल**) के नाम से भेजें अथवा निम्नलिखित खाते सीधें जमा करायें –

अकाउण्ट का नाम : रामकृष्ण मिशन आश्रम, भोपाल
बैंक का नाम : भारतीय स्टेट बैंक
शाखा का नाम : बरखेड़ा शाखा, भोपाल
अकाउण्ट नम्बर : 30164666050
आईएफएससी कोड : SBIN0002375

दानदाता अपना पूरा नाम, पूरा पता, पैन (pan) अथवा आधार कार्ड न. तथा दानराशि की सूचना हमें पत्र अथवा ई-मेल द्वारा अवश्य भेजें। चेक/ड्राफ्ट अथवा बैंक माध्यम से प्रेषित सभी दान के लिए ८०-जी रसीद प्रदान की जायेगी।

रामकृष्ण मिशन आश्रम, भोपाल को प्रदत्त दान आयकर की धारा ८०-जी के अन्तर्गत आयकर-मुक्त है।

निवेदक
स्वामी नित्यज्ञानानन्द
सचिव
मो. 9027687129

।। आत्मनो मोक्षार्थं जगद्धिताय च ।।

विवेक-ज्योति

श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द भावधारा से अनुप्राणित

हिन्दी मासिक

वर्ष ६२ मार्च २०२४ अंक ३

श्रीरामकृष्ण प्रातः स्मरण-स्तोत्रम्

प्रातः स्मरामि जगतो भवभावहेतुं
हेतुं लयस्य च भवाम्बुधि-पार-सेतुम् ।
लीलाविलास-विलसद्-वपुषं सुधीशं
श्रीरामकृष्णमवतारवरं तमीशम् ।।१।।
प्रातर्नमामि कलिदोषविदाहदक्षं
चानन्दकन्दमरविन्ददलायताक्षम् ।
यः कामकाञ्चनमहोतनुवाङ्मनोभि
रेजे विहाय भुवि संयत वाक्सदाभिः ।।२।।

– जो जगत् की सृष्टि, स्थिति और प्रलय के मूल कारण, भव-सागर पार करने के सेतु है, दिव्य लीला-विलास हेतु सुन्दर शरीरधारी है, उन विद्वद्वर, अवतारवरिष्ठ श्रीरामकृष्ण देव का मैं शुभ प्रातःकाल में स्मरण करता हूँ।

जो कलियुग के पाप-नाश में दक्ष हैं, आनन्द के मूल कारण हैं, जिनके कमल-दल के सदृश विशाल नेत्र हैं, जो वाक्, काय, मन से काम-कांचन का त्याग कर इस धरातल और स्व-संयमित वाणी से सदैव निर्भर होकर विराजित रहनेवाले हैं, उन श्रीरामकृष्ण देव को मैं प्रातःकाल में नमन करता हूँ।

पुरखों की थाती

पादाभ्यां न स्पृशेदग्निं गुरुं ब्राह्मणमेव च।
नैव गावं कुमारीं च न वृद्धं न शिशुं तथा।।८२३।।

– अग्नि, गुरु, ज्ञानी, गाय, कुँवारी कन्या, वृद्ध और शिशु का पाँवों से स्पर्श नहीं करना चाहिए।

प्रजासुखे सुखं राज्ञः प्रजानां तु हिते हितम्।
नात्मप्रियं हितं राज्ञः प्रजानां तु प्रियं हितम्।।८२४।।
(कौटिल्य)

– राजा या शासक का सुख प्रजा के सुख में निहित है, प्रजा के हित में ही उसका अपना भी हित है। स्वयं को प्रिय लगने वाली चीज राजा के लिये सर्वदा हितकर नहीं होती, बल्कि जो प्रजा को प्रिय लगे, वही उसके लिये भी हितकर है।

प्रभूतं कार्यमल्पं वा यन्नरः कर्तुमिच्छति।
सर्वारम्भेण तत्कार्यं सिंहादेकं प्रचक्षते ।।८२५।।

– सिंह से हमें यह शिक्षा मिलती है कि कार्य छोटा हो या बड़ा शुरू से ही उसमें अपनी पूरी शक्ति लगा देनी चाहिए।

आपस में झगड़े की कोई आवश्यकता नहीं : विवेकानन्द

मेरे गुरुदेव का मानव जाति के लिए यह सन्देश है कि 'प्रथम स्वयं धार्मिक बनो और सत्य की उपलब्धि करो।' वे चाहते थे कि तुम अपने भ्रातृ-स्वरूप समग्र मानव जाति के कल्याण के लिए सर्वस्व त्याग दो। उनकी ऐसी इच्छा थी कि भ्रातृ-प्रेम के विषय में बातचीत बिल्कुल न करो, वरन् अपने शब्दों को सिद्ध करके दिखाओ। त्याग तथा प्रत्यक्षानुभूति का समय आ गया है और इनसे ही तुम जगत के सभी धर्मों में सामंजस्य देख पाओगे। तब तुम्हें प्रतीत होगा कि आपस में झगड़े की कोई आवश्यकता नहीं है और तभी तुम समग्र मानव जाति की सेवा करने के लिए तैयार हो सकोगे। इस बात को स्पष्ट रूप से दिखा देने के लिए कि सब धर्मों में मूल तत्त्व एक ही है, मेरे गुरुदेव का अवतार हुआ था। अन्य धर्म-संस्थापकों ने स्वतंत्र धर्मों का उपदेश दिया था और वे धर्म उनके नाम से प्रचालित हैं, परन्तु उन्नीसवीं शताब्दी के इन महापुरुष ने स्वयं के लिए कोई भी दावा नहीं किया, उन्होंने किसी धर्म को क्षुब्ध नहीं किया, क्योंकि उन्होंने प्रत्यक्ष अनुभव कर लिया था कि वास्तव में सभी धर्म एक ही 'चिरन्तन धर्म' के अभिन्न अंग हैं। (७/२६७)

आर्य जाति का प्रकृत धर्म क्या है और सतत विद्यमान आपातप्रतीयमान अनेकशः विभक्त, सर्वथा प्रतिद्वंद्वी आचारयुक्त सम्प्रदायों से घिरे, स्वदेशियों का भ्रान्ति-स्थान एवं विदेशियों का घृणास्पद हिन्दू धर्म नामक युग-युगान्तरव्यापी विखण्डित एवं देशकाल के योग से इधर-उधर बिखरे हुए धर्मखण्डसमष्टि के बीच यथार्थ एकता कहाँ है, यह दिखलाने के लिए तथा कालवश नष्ट इस सनातम धर्म का सार्वलौकिक, सार्वकालिक और सार्वदेशिक स्वरूप अपने जीवन में निहित कर, संसार के सम्मुख सनातम धर्म के सजीव उदाहरणस्वरूप अपने को प्रदर्शित करते हुए लोक-कल्याण के लिए भगवान श्रीरामकृष्ण अवतीर्ण हुए।

श्रीरामकृष्ण का जीवन एक असाधारण ज्योतिर्मय दीपक है, जिसके प्रकाश में हिन्दू धर्म के विभिन्न अंग एवं आशय समझे जा सकते हैं। शास्त्रों में निहित सिद्धान्त-रूप ज्ञान के वे प्रत्यक्ष उदाहरणस्वरूप थे। ऋषि और अवतार हमें जो वास्तविक शिक्षा देना चाहते थे, उसे उन्होंने अपने जीवन द्वारा दिखा दिया है। शास्त्र मतवाद मात्र हैं, रामकृष्ण उनकी प्रत्यक्ष अनुभूति। उन्होंने ५१ वर्ष में पाँच हजार वर्ष का राष्ट्रीय आध्यात्मिक जीवन जिया और इस तरह से वे भविष्य की सन्तानों के लिए अपने आपको एक शिक्षाप्रद उदाहरण बना गये। विभिन्न मत एक-एक अवस्था या क्रम मात्र हैं, उनके इस सिद्धान्त से वेदों का अर्थ समझ में आ सकता है और शास्त्रों में सामंजस्य स्थापित हो सकता है—दूसरे धर्म या मत के लिए हमें केवल सहनशील ही नहीं होना चाहिए, वरन् उन्हें स्वीकार कर जीवन में प्रत्यक्ष परिणत करना चाहिए और वह सत्य ही सब धर्मों की नींव है।

इस महायुग के उषाकाल में सभी भावों का मिलन प्रचारित हो रहा है और यही असीम अनन्त भाव, जो सनातन शास्त्र और धर्म में निहित होते हुए भी अब तक छिपा हुआ था, पुनः आविष्कृत होकर उच्च स्वर से जन-समाज में उद्घोषित हो रहा है।

यह नव युगधर्म समस्त जगत् के लिए, विशेषतः भारत के लिए महाकल्याणकारी है और इस युगधर्म के प्रवर्तक भगवान रामकृष्ण पहले के समस्त युगधर्म-प्रवर्तकों के पुनर्संशोधित अभिव्यक्ति हैं। हे मानव, इस पर विश्वास करो और इसे हृदय में धारण करो।

सम्पादकीय

जितने मत उतने पथ : श्रीरामकृष्ण की उद्घोषणा

भगवान श्रीशंकराचार्य जी कहते हैं –

दुर्लभं त्रयमेवैतत् देवानुग्रहहेतुकम्।
मनुष्यत्वं मुमुक्षुत्वं महापुरुषसंश्रयः।।

अर्थात् मानव-जन्म, मोक्षप्राप्ति की इच्छा और महापुरुष का सान्निध्य; तीनों ही दुर्लभ हैं। कोटि जन्मों के पुण्य से जब किसी-किसी भाग्यशाली के मन में मुक्तिप्राप्ति की सदिच्छा उत्पन्न होती है, तब वह मुक्ति-मार्गवेत्ता गुरु के अन्वेषण की ओर अग्रसर होता है। जब उसे सद्गुरु की प्राप्ति होती है, तब गुरु उसकी स्वाभाविक रुचि के अनुसार उसकी प्रकृति को समझकर मार्ग का निर्देश करते हैं और गुरु द्वारा निर्देशित पथ पर चलकर वह अपने जीवन के अन्तिम लक्ष्य भगवद् दर्शन कर धन्य हो जाता है और संसार के समस्त बन्धनों को तोड़कर सर्वदा के लिये मुक्त हो जाता है।

भगवान के दर्शन के लिये कोई एक निश्चित पथ नहीं है। देश-काल-परिस्थिति के अनुसार, व्यक्ति की प्रकृतिवशात् विभिन्न पथों का प्रचलन हुआ। भगवान के अनन्त रूप हैं। उन अनन्त रूपों में निहित परमात्मा की उपासना करके भक्त उस एक परमात्मा तक ही पहुँचता है। जो साधक साधना और ईश्वर-कृपा से इस अनेकत्व में एकत्व की अनुभूति कर लेता है, वह किसी पथ और मत को लेकर विवाद नहीं करता। किन्तु जब तक वह बुद्धिस्तर पर रहता है, अनुभूति से अनभिज्ञ रहता है, तब तक उसे संशय रहता है और विवाद को जन्म देता है। इसलिये सच्चा भक्त भगवान की वाणी पर विश्वास कर, अनुभूतिसम्पन्न गुरु और आचार्यों की वाणी पर विश्वास कर इन विवादों में अपनी ऊर्जा और समय व्यर्थ नष्ट न कर ईश्वर के मार्ग में आगे बढ़ जाता है। भगवान श्रीरामकृष्ण कहते थे, बगीचे में आये हो, तो आम खाओ, पेड़ गिनने में क्यों लग जाते हो। इसके बाद भी कभी-कभी द्वैत-अद्वैत, विशिष्टाद्वैत, शाक्त-शैव के अनुयायियों में परस्पर विवाद के दृष्टान्त मिलते हैं। एक शिव भक्त तो ऐसे थे कि उन्होंने अपने कान में घंटे बाँध रखे थे कि दूसरा कोई नाम न सुन सकें, जिन्हें हम घण्टाकर्ण के नाम से जानते हैं।

सच्चा भक्त कभी संकीर्ण नहीं होता। वह दूसरों के पथ को लेकर विवाद नहीं करता। वह तो अपने गुरु द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर अनन्य निष्ठा, भक्ति, समर्पण और उद्यम के साथ अग्रसर होता जाता है।

भगवान श्रीरामकृष्ण देव भक्तों को सर्वदा पथ-भ्रमित होने से रक्षा करते थे और उन्हें अस्ति-नास्ति, पथ-मतादि के वाद-विवाद में न उलझकर सीधे ईश्वर के प्रति भक्ति करने का निर्देश देते थे। वे कहते थे, यदि आन्तरिकता हो, तो सभी धर्मों से ईश्वर मिल सकते हैं। वैष्णवों को भी मिलेंगे तथा शाक्तों, वेदान्तियों और ब्राह्मों को भी, मुसलमानों और ईसाइयों को भी। हृदय से चाहने पर सबको मिलेंगे।[१]

१३ अगस्त, १८८२ को दक्षिणेश्वर में एक गायक ने श्रीरामकृष्ण से पूछा, महाराज, किस उपाय से उन्हें (ईश्वर को) प्राप्त किया जा सकता है? तब श्रीरामकृष्ण देव कहते हैं – "सभी धर्मों से उन्हें प्राप्त किया जा सकता है। सभी धर्म सत्य हैं। छत पर चढ़ने से मतलब है, सो तुम पक्की सीढ़ी से भी चढ़ सकते हो, लकड़ी की सीढ़ी से भी चढ़ सकते हो, बाँस की सीढ़ी से भी चढ़ सकते हो, रस्सी के सहारे भी चढ़ सकते हो और फिर एक गाँठदार बाँस से भी चढ़ सकते हो।[२]

श्रीरामकृष्ण देव ने स्वयं कई धर्मों की साधनाएँ कर उन-उन धर्मों के उच्चतम आदर्श का साक्षात्कार किया था। फिर अनन्त भावमय ठाकुर ने तन्त्र साधना भी की थी और अन्य कई भावों और मतों के द्वारा उनके परम अभीष्ट का साक्षात्कार किया था। इसलिये वे शास्त्र प्रतिपाद्य एक ईश्वर की अनुभूति के विभिन्न मार्गों की सत्यता से अवगत थे। उन्होंने ईश्वर के व्यापक विराट सर्वांगी स्वरूप का बोध किया था, तभी उन्होंने ७ सितम्बर, १८८४ को अनन्त मतों, अनन्त पथों के सत्य की घोषणा की थी।

श्रीरामकृष्ण ने किस परिवेश में यह घोषणा की थी, आइये, थोड़ा इसका अवलोकन करते हैं। वे ७ सितम्बर, १८८४ को पूर्वाह्न ११ बजे दक्षिणेश्वर काली मन्दिर परिसर के अपने कक्ष में छोटी खाट पर विराजमान हैं। आज यहाँ श्यामदास का कीर्तन होगा। श्रीरामकृष्ण को कीर्तन के आनन्द में विभोर देखने के लिये बहुत से भक्त आ रहे हैं।

बाबूराम, मास्टर, श्रीरामपुर के ब्राह्मण, मनोमोहन, भवनाथ, किशोरीलाल, चुनीलाल, हरिपद, मुखर्जीबन्धुद्वय, राम, सुरेन्द्र, तारक, अधर और निरंजन, लाटू, हरीश, हाजरा, रामलाल, ये लोग वहाँ बैठे हुये हैं। श्रीरामपुर के ब्राह्मण रामप्रसाद के गीत की पुस्तक से पढ़कर गीत सुना रहे हैं। उसके बाद श्रीरामकृष्ण स्वयं ही बाउल के गीत गाने लगे। उस समय बाउल, वैष्णव मत, शाक्त मत, वेदान्त मत, राधा तन्त्र, कर्ताभजा आदि की थोड़ी चर्चा चली। उस समय ठाकुरजी कहते हैं – 'देखा, कितने प्रकार के मत हैं। जितने मत उतने पथ। अनन्त मत और अनन्त पथ हैं।''[३] इतने पथों और मतों के बारे में सुनकर भवनाथ ने पूछा, अब उपाय क्या है? श्रीरामकृष्ण मानो भक्तों को भ्रमित होने से बचाने और सिद्धान्त को अधिक स्पष्ट समझाते हुये कह रहे हैं – एक को बलपूर्वक पकड़ना पड़ता है। छत पर जाने की इच्छा है, तो जीने से भी चढ़ सकते हो, बाँस की सीढ़ी लगाकर चढ़ सकते हो, रस्सी की सीढ़ी से, केवल रस्सी पकड़कर या केवल एक बाँस के सहारे, किसी भी प्रकार से छत पर पहुँच सकते हो। परन्तु एक पैर इसमें और एक पैर उसमें रखने से नहीं होता। एक दृढ़ भाव से पकड़े रहना चाहिये। ईश्वर-लाभ करने की इच्छा हो, तो एक ही रास्ते पर चलना चाहिये।'' इसके आगे भक्तों को संकीर्णता से सावधान करते हुये श्रीरामकृष्ण देव ने कहा – ''अन्य दूसरे मतों को भी एक-एक मार्ग समझना। यह भाव न हो कि मेरा ही मार्ग ठीक है और अन्य सब झूठ हैं, द्वेष न हो।''[४]

''जो भी धर्म हो, जो भी मत हो, सभी उसी एक ईश्वर को पुकार रहे हैं। इसीलिये किसी भी धर्म अथवा मत के प्रति अश्रद्धा या घृणा नहीं करनी चाहिये। एक के अतिरिक्त दो तो नहीं हैं, चाहे जिस नाम से कोई ईश्वर को पुकारे, यदि वह पुकार हार्दिक हो, वह उसके पास अवश्य पहुँचेगी। व्याकुलता चाहिये।''[५]

युगावतार श्रीरामकृष्ण का यह सर्वधर्म, सर्वसम्प्रदाय और सर्वमतों के प्रति अत्यन्त उदात्त सर्वश्रेष्ठ विचार और सम्मान है, जो उनके उदार, सर्वांगीण सर्वोत्कृष्ट दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करता है।

भगवान श्रीकृष्ण ने भी गीता में कहा है, **ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।** – जो जिस प्रकार मेरे शरणागत होता है, मैं उन्हें उसी प्रकार प्राप्त होता हूँ। स्वामी विवेकानन्द ने शिकागो के विश्व धर्म-सम्मेलन में सर्वधर्म समन्वयकारी पुष्पदन्त प्रणीत शिवस्तोत्र के निम्नलिखित श्लोक का उल्लेख करते हुये कहा था, जो भारतीय संस्कृति और हमारे ऋषियों की उदात्त दृष्टि का द्योतक है –

त्रयी सांख्यं योगः पशुपतिमतं वैष्णवमिति
प्रभिन्ने प्रस्थाने परमिदमदः पथ्यमिति च।
रुचीनां वैचित्र्यादृजुकुटिल-नाना-पथजुषां,
नृणाम्मेको गम्यस्त्वमसि पयसामर्णव इव।।

– हे प्रभो ! वेदत्रय, सांख्यशास्त्र ,योगशास्त्र, शैवशास्त्र, वैष्णवशास्त्र इत्यादि मत-मतान्तरों में 'यही सर्वश्रेष्ठ एवं मंगलकारी है' ऐसी भावना एवं भिन्न-रुचि के कारण सरल तथा वक्र विभिन्न मार्गों से लोग आपको ही प्राप्त होते हैं, जैसे सीधे-टेंढ़े मार्गों से बहती हुई नदियाँ अन्त में समुद्र में ही पहुँचती हैं।

उपनिषद में कहा गया है, **यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः** – जो वरण करेगा, वह उसे प्राप्त करेगा। इसमें कोई बन्धन नहीं है, कोई शर्त नहीं है। जो भी व्यक्ति चाहे वह हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, वहाई, कोई भी हो, जो वरण करेगा, वह उसे प्राप्त करेगा।

सभी मतों-पथों की अनुभूति के उच्च शिखर पर आरूढ़ होकर के ही युगावतार भगवान श्रीरामकृष्ण देव ने 'जितने मत उतने पथ' की उद्घोषणा की थी। एक प्रसंग में उन्होंने जयगोपाल को सावधान करते हुये कहा था, ''किसी से, किसी मत से विद्वेष नहीं करना चाहिये। निराकारवादी, साकारवादी, सभी उन्हीं की ओर जा रहे हैं, ज्ञानी, योगी; भक्त सभी उन्हें ही खोज रहे हैं। ज्ञानमार्ग के लोग कहते हैं ब्रह्म, योगीगण कहते हैं आत्मा, परमात्मा, भक्तगण कहते हैं भगवान, फिर यह भी है नित्यदेव नित्यदास।''[६]

जयगोपाल के पूछने पर कि सभी पथ सत्य हैं, इसे कैसे जानें? तो श्रीरामकृष्ण कहते हैं – ''किसी एक पथ से ठीक-ठीक जा सकने पर उनके पास पहुँचा जा सकता है, उस समय सभी पथों का पता भी जाना जा सकता है...।''[७]

अतः साधक-भक्त को व्यर्थ वाद-विवाद में न पड़कर अपने अनुकूल किसी एक पथ से जाकर परमात्मा की अनुभूति कर अपने जीवन को धन्य करना चाहिये। ○○○

सन्दर्भ ग्रन्थ – १. जितने मत उतने पथ, पृ.३ **२.** श्रीरामकृष्ण-वचनामृत, खण्ड १, पृ.५३ **३.** वचनामृत,१/५९२ **४.** वचनामृत १/५९२-९३ **५.** अमृतवाणी, पृ.८ **६ और ७.** श्रीरामकृष्ण-वचनामृत भाग १. पृष्ठ ४२४

भारत में रामकृष्ण संघ का प्रथम मन्दिर

स्वामी अलोकानन्द

रामकृष्ण अद्वैत आश्रम, वाराणसी

(इस वर्ष २०२४ में स्वामी विवेकानन्द और स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज की बेलूड़ मठ स्थित मन्दिर स्थापना की शताब्दी के उपलक्ष्य में मन्दिरों से सम्बन्धित आलेख शृंखला प्रकाशित किया जा रहा है। प्रस्तुत आलेख का हिन्दी अनुवाद उत्कर्ष चौबे, वाराणसी ने किया है।)

शब्दकल्पद्रुम के अनुसार मन्द+किरच् प्रत्यय को जोड़ने से क्लीवलिंग शब्द 'मन्दिरम्' की उत्पत्ति होती है। 'मदिङ्' धातु का अर्थ शब्दकल्पद्रुम में इस प्रकार बताया गया है – '**मन्द्यते सुप्यतेऽत्र मन्दिरम्। मदिङ् स्वपने जाड्ये मदे मोदे स्तुतौ गतौ नाम्नीति इरः।**' पाणिनि के अनुसार – अर्थात् स्तुति के अर्थ में मदि धातु के उत्तर में इर प्रत्यय के द्वारा मन्दिर शब्द निष्पन्न होता है। अमरकोश में मन्दिर का अर्थ है – '**मन्दते सुप्यतेऽत्र मन्दिरम्**'। इसीलिये शिल्पमन्दिर, विद्यामन्दिर, कलामन्दिर इत्यादि कहा जाता है। किन्तु साधारणत: देवगृह को ही मन्दिर कहा जाता है, जहाँ सार्वजनिक रूप से देवताओं की स्तुति, भजन, पूजा, सेवा, कीर्तनादि सदा होती रहती है।

आध्यात्मिक व्यक्ति किसी एक निर्दिष्ट स्थान पर बैठकर इष्ट चिन्तन अथवा जप-ध्यानादि करते थे। कालक्रम में वही स्थान मन्दिर के रूप में रूपान्तरित हुआ। मन्दिर में अन्य किसी विषय की आलोचना या चिन्तन करना पूर्णत: निषिद्ध है। नित्य भगवद्विषय का चिन्तन वहाँ एक आध्यात्मिक परिवेश का सृजन करता है। उस परिवेश में जो भी जाता है, वह निश्चित रूप में उससे प्रभावित होता है। क्योंकि वे अनुभव करते हैं पवित्रता, शान्ति व आनन्द। विपरीत विचारों का उदय होने से उस परिवेश की क्षति होती है। एक बार दक्षिणेश्वर में स्वयं भगवान श्रीरामकृष्ण माँ भवतारिणी के मन्दिर में भजन गा रहे थे। श्रोता के रूप में स्वयं मन्दिर प्रतिष्ठात्री रानी रासमणि उपस्थिति थीं। भजन सुनते-सुनते ही एकाएक रानी के मन में अदालत में चल रहे किसी मामले की ओर ध्यान चला गया। तत्काल ही श्रीरामकृष्ण ने भजन रोककर रानी को एक जोरदार तमाचा लगाते हुए कहा – ''यहाँ बैठकर भी वही विचार! रासमणि की चेतना लौटी और उन्होंने अपनी भूल स्वीकार की। किन्तु उनके निकटवर्ती कर्मचारी अपनी रानी माँ के इस अपमान का दोष पागल श्रीरामकृष्ण को ही देने लगे, तब रानी ने उन्हें मना किया। इस प्रसंग से यह भली-भाँति समझा जा सकता है कि ऐसे फटकार का कारण स्पष्ट था कि मन्दिर का पवित्र परिवेश कलुषित न हो जाये। रानी रासमणि भी स्वयं अपनी भूल को समझकर दुखित हुईं। इस प्रकार मन्दिर के माहात्म्य व वैशिष्ट्य को सहज ही समझा जा सकता है।

भक्तिशास्त्र में ईश्वर के प्रति भक्ति-निवेदन और भक्ति साधना के विषय में कई बातें हैं। श्रीमद्भागवत महापुराण में भी नवधा भक्ति के विषय में कई बातें कही गई हैं –

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्।।
इति पुंसाऽर्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्नवलक्षणा।
क्रियते भगवत्यद्धा तन्मन्येऽधीतमुत्तमम्।।

(भा.पु. ७.५.२३-२४)

किन्तु मन्दिर-निर्माण व सेवा के विषय में भगवान ने उद्धव से कहा था –

ममार्चास्थापने श्रद्धा स्वतः संहत्य चोद्यमः।
उद्यानोपवनाक्रीड पुरमन्दिरकर्मणि।।
सम्मार्जनोपलेपाभ्यां सेकमण्डलवर्तनैः।

गृहशुश्रूषणं मह्यं दासवद्यदमायया।।

(भा. पु. ११.११.३८-३९)

अर्थात् मन्दिरों में मेरी मूर्तियों की स्थापना में श्रद्धा रखे। यदि यह काम अकेला न कर सके, तो दूसरों के साथ मिलकर उद्योग करे। मेरे लिए पुष्पवाटिका, बगीचे, क्रीड़ा के स्थान, नगर और मन्दिर बनवावे। सेवक की भाँति श्रद्धाभक्ति के साथ निष्कपट भाव से मेरे मन्दिरों की सेवा-शुश्रुषा करे, झाड़े-बुहारे, लीपे-पोते, छिड़काव करे और सर्वतोभद्रमण्डल निर्माण कर दास्य भाव से मेरे गृह की सेवा करे।

अग्निपुराण में कहा गया है –

ये ध्यायन्ति सदा बुद्ध्या करिष्यामो हरेर्गृहम्।
तेषां विलीयते पापं पूर्वजन्मशतोद्भवम्।।

तो वहीं वामनपुराण के शेषाध्याय में आता है –

यः कारयेन्मन्दिरं केशवस्य
पुण्याल्लोकान् स जयेच्छाश्वतान् वै।
दत्त्वावासान् पुष्पफलाभिपन्नान्
भोगान् भुङ्क्ते कामतः श्लाघनीयान्।।

मूलत: शास्त्रों में भी देवताओं के मन्दिरों की प्रयोजनीयता तथा अध्यात्म पथ के साधन में उसकी उपयोगिता स्वीकृत है।

मन्दिरमय भारतवर्ष व मन्दिरमय काशी

भारतवर्ष के प्राय: सभी स्थानों में हमें शिव, विष्णु, देवी सहित अन्यान्य देवी-देवताओं के विभिन्न प्रकार के छोटे-बड़े मन्दिर दृष्टिगोचर होते हैं। प्रत्येक मन्दिर किसी न किसी साधक, महापुरुषों के साधन क्षेत्र, अवतारों के लीलास्थानों को केन्द्र कर ही बने हैं। कहीं-कहीं देवी-देवताओं द्वारा अपनी महिमा जनसाधारण के मध्य प्रसारित करने के उद्देश्य से भी मन्दिर-निर्माण हुए हैं। आज भी वे सभी मन्दिर कई प्रकार के विघ्नों को पार करके अध्यात्मचिन्तक भारतवासियों के निकट अध्यात्मप्रेरक स्थल के रूप में स्वमहिमा विस्तार कर रहे हैं।

काशी भगवान विश्वनाथ की लीलाभूमि है। इस पवित्र भूमि पर युगों-युगों से शत-शत मन्दिर हैं। गणेश, शिव, विष्णु, देवी, सूर्य, भैरवादि के न जाने कितने ही मन्दिर हैं। प्रत्येक मन्दिर में अगणित भक्त, साधक, संन्यासी, योगी सभी पूरी श्रद्धा सहित पूजा-अर्चना व साधन-भजन करते चले आ रहे। यहाँ पर विभिन्न समय में भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के प्रवर्तक, महापुरुष, सन्त व साधक आये हैं, निवास किया है तथा अपने साधन-भजन के द्वारा यहाँ के आध्यात्मिक परिवेश को समृद्ध व पुष्ट किया है।

जब युगपुरुष, युगावतार भगवान श्रीरामकृष्ण परमहंस देव काशी धाम में पधारे थे, तब उन्होंने काशी को स्वर्णमयी काशी कहा था। यह स्वर्ण भौतिक स्वर्ण नहीं, अपितु यह था साधुमन में तपस्या की प्रभा में उद्भासित काशी धाम। स्वयं बाबा विश्वनाथ ने देवी पार्वतीजी से कहा था –

पंचक्रोशात्मिका काशी ब्रह्मतेजोमयी श्रिता।
अर्धचन्द्रात्मिका देवी दृश्यते सर्वजातिभिः।।
यत्र भस्मकृतं सर्वं जगदेतच्चराचरम्।
महाश्मशानं तद्विद्धि सर्वेषां लयकारणात्।।
दृष्ट्वा तु परमेशानि आनन्दो मम जायते।
आनन्दकाननं तस्मात् गीयते वेदवादिभिः।।

श्रीरामकृष्ण अद्वैत आश्रम, वाराणसी

विश्वविजयी स्वामी विवेकानन्द सन् १९०२ में अन्तिम बार काशी आये थे। स्वामीजी के जन्म के पूर्व उनकी गर्भधारिणी माता ने संतान-प्राप्ति की कामना से भगवान आत्मवीरेश्वर शिव की पूजा करवा कर मन्नत की थी। 'आत्मवीरेश्वरात् समुत्पन्न' परिव्राजक संन्यासी के रूप में स्वामी विवेकानन्द काशी धाम आये थे। उस समय वे अपरिचित युवा संन्यासी थे। किन्तु तभी उनके ज्ञानदीप्त वाक्य व प्रज्ञा ने तत्कालीन काशी के कई विद्वानों की दृष्टि आकृष्ट की थी। उसी समय उन्होंने वार्तालाप के प्रसंग में कहा था, 'इसके बाद जब पुन: यहाँ आऊँगा, तो बम की तरह फट जाऊँगा और सभी लोग कुत्तें की भाँति मेरा अनुसरण करेंगे।'' सन् १८९३ के सितम्बर में आयोजित शिकागो विश्वधर्म सम्मेलन में स्वामीजी जगत विख्यात हुए। उनके मुखारविंद से कई लोगों ने नवयुग का वेद श्रवण कर तदनुसार जीवनयापन किया। स्वामीजी के मंत्र 'शिव ज्ञान से जीव सेवा' से अनुप्राणित ऐसे ही एक युवा गोष्ठी का गठन काशी में भी हुआ था। 'Poor Men's Relief Association' नामक प्रतिष्ठान के माध्यम से काशीस्थ ये युवकगण सेवाव्रत चला रहे थे। निकटवर्ती भृंग स्टेट के राजा धार्मिक व लोकोपकारी कार्य करनेवाले थे। स्वामी विवेकानन्द के काशी आगमन की बात उनके कानों में पड़ी। काशी में स्वामीजी द्वारा बिना कुछ कहे ही उन्होंने स्वयं अपनी ओर से पहल करते हुए ५०० रुपये स्वामीजी को दिया तथा आश्रम-स्थापना का अनुरोध किया। मठ लौटकर

स्वामीजी ने इस कार्य का दायित्व अपने गुरु-भ्राता स्वामी शिवानन्द को दिया। १९०२ के जून मास के अन्तिम समय में महापुरुष स्वामी शिवानन्द जी काशी आये। ४ जुलाई, १९०२ को उन्होंने खजांची लोगों के बगानबाड़ी को १० रुपये प्रतिमाह किराये पर लेकर श्रीरामकृष्ण अद्वैत आश्रम की स्थापना की। संयोगवशात् इसी दिन स्वामी विवेकानन्द ने बेलूड़ मठ में महासमाधि ली।

स्वामी शिवानन्द जी के तप:पूत जीवनालोक के द्वारा स्वामी विवेकानन्द की यह इच्छा पूर्ण हुई। समय के साथ नाना घात-प्रतिघात को सहते हुए यह आश्रम महापुरुष महाराज के तपोबल के कारण चलता रहा। इसी बीच खजांची लोगों ने बगान को विक्रय करने की योजना बनाई, तो रामकृष्ण मिशन ने ६००० रुपये देकर इसे क्रय कर लिया। सन् १९०८ में स्वामी शिवानन्द जी के बेलूड़ मठ चले जाने पर स्वामी निर्भरानन्द (चन्द्र महाराज) ने आश्रम का दायित्व ग्रहण किया। उस समय वर्तमान दुर्गा मण्डप से संलग्न खण्ड ही केवल था। उत्तर का पहला कमरा ही प्रथम मन्दिर के रूप में उपयोग किया जाता था। १९२३ में माघी पूर्णिमा के दिन लाटू महाराज की पावन स्मृति में दुर्गा मण्डप के उत्तर में दो मंजिले भवन का निर्माण हुआ तथा निचले मंजिल पर महावीर हनुमानजी के मन्दिर की स्थापना हुई। धीरे-धीरे चन्द्र महाराज उत्तर व दक्षिण की ओर भवन निर्माण करने लगे। उत्तर में एकतला में हनुमान मंदिर, दोतले पर लाटू महाराज स्मृति कक्ष तथा ठाकुरजी का द्वितीय मन्दिर १९२३ में हुआ। इसके पहले सम्भवत: १९१० साल के आस-पास दक्षिण दिशा में भवनों का निर्माण-कार्य हुआ, जिसमें प्रथम तल पर रसोई घर, भोजन कक्ष तथा साधुओं के निवास हेतु कुछ कक्ष तथा ऊपरी तल पर साधुओं के निवास हेतु कई कक्ष बनाये गये। सन् १९१६ में स्वामी ब्रह्मानन्द जी ने काशी प्रवास के दौरान दक्षिण दिशा के भवन में द्वितीय तल के अन्तिम कक्ष में निवास किया था।

स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज

चन्द्र, काशी में ठाकुरजी का मन्दिर निर्माण करना – स्वामी ब्रह्मानन्द

महापुरुष स्वामी शिवानन्द जी की हार्दिक इच्छा थी कि अद्वैत आश्रम में ठाकुरजी का एक मन्दिर हो। किसी समय स्वामी ब्रह्मानन्द जी ने भी चन्द्र महाराज को कहा था, ''चन्द्र, काशी में ठाकुरजी का एक मन्दिर निर्माण करना।'' सन् १९३० का पदार्पण हुआ। चन्द्र महाराज स्वामी ब्रह्मानन्द व स्वामी शिवानन्द जी की बातों को स्मरण करके ठाकुर मन्दिर के निर्माण के लिए एकाग्रचित हुए। तत्कालीन अद्वैत आश्रम की आर्थिक स्थिति को देख मन्दिर-निर्माण का कार्य आरम्भ करना उनके अदम्य साहस का परिचायक है। शारीरिक रूप से कमजोर हो चुके चन्द्र महाराज के हृदय में इस ऐतिहासिक कार्य के लिए अथाह उत्साह था, तभी तो उन्होंने तत्कालीन मठाध्यक्ष स्वामी शिवानन्द जी से आग्रह किया कि वे भूमि पूजनार्थ चार ईंटों का पूजन कर कलकत्ता से भेज दें। स्वामी शिवानन्द जी द्वारा पूजित चारों ईंटों को बेलूड़ मठ से काशी लेकर आये श्रीमाँ के शिष्य स्वामी कैवल्यानन्द जी (योगीराज महाराज)। प्रत्यक्षदर्शी स्वामी अचलानन्द जी के अनुसार, 'काशी अद्वैताश्रम में श्रीठाकुरजी के मन्दिर निर्माण के पूर्व पूजनीय चन्द्र महाराज ने शिलान्यास के लिए महापुरुष जी द्वारा संस्पर्श व पूजित ईंटों की कामना की थी। हमलोगों के सामने स्वामी शिवानन्द जी ने गंगाजल से धोये हुए ईंटों का पूजन कर श्रीठाकुर से प्रार्थना की – ठाकुरजी, काशी में चन्द्र आपका मन्दिर बनवाना चाहता है। उसका यह कार्य सुसम्पन्न हो।'' उन्हीं ईंटों से मन्दिर की नींव पड़ी।

स्वामी विज्ञानानन्द जी ने इस मन्दिर के लिए नक्शा बनवाया तथा उन्हीं के तत्त्वावधान में निर्माण-कार्य प्रारम्भ हुआ। चन्द्र महाराज ने बागान के मध्य आश्रम में जामुन के एक वृक्ष पर एक बॉक्स लटका दिया तथा मन्दिर का एक मानचित्र लटकाकर निवेदन किया कि प्रभु के मन्दिर निर्माण के लिए सामर्थ्यानुसार दान करें। सुना जाता है कि उस समय वहीं से २८००० रुपये मिले थे, जो किसी चमत्कार से कम नहीं था। इसके अलावा अन्यान्य लोगों की आर्थिक सहायता से मन्दिर-निर्माण का कार्य १९३६ में पूर्ण हुआ।

सन् १९३६ ठाकुरजी का जन्मशतवार्षिकी वर्ष था। विश्वव्यापी उत्सव का आयोजन हुआ था। इसी श्रीठाकुरजी के

शुभाविर्भावतिथि के शुभ अवसर पर शास्त्रविहित नियमानुसार स्वामी विज्ञानानन्द जी ने इस मन्दिर का द्वारोद्घाटन किया। उन्होंने गर्भगृह में स्थापित संगमर्मर के विग्रह पर अर्घ्यदान कर कहा, ''जैसा देखा था, ठीक वैसे ही बैठे हुए हैं।'' ऐसे ब्रह्मज्ञ महापुरुष द्वारा दृष्टिपूत विग्रह आज भी मन्दिर में पूजित है।

मन्दिर की विशिष्टता

रामकृष्ण मठ व रामकृष्ण मिशन द्वारा स्थापित भारतवर्ष में यह प्रथम मन्दिर है। चुनार-पत्थर से निर्मित इस मन्दिर का नक्शा स्वामी विज्ञानानन्द जी ने अपनी निजी परिकल्पना से बनाया था। इसके कारण यह मन्दिर परवर्ती काल में निर्मित अन्य मन्दिरों से पृथक् होने के साथ-साथ अद्वितीय एवं विशिष्ट है। मन्दिर द्वितला है। भूमि में सीढ़ियों के सहारे दूसरे तल पर जाया जाता है, जहाँ गर्भगृह है। वाराणसी के प्राचीन मन्दिरों की शैली में निर्मित इस मन्दिर में पत्थरों की उचित कटाई कर उन्हें सुगठित किया गया है। मन्दिर के दिवारों पर अनेकों देव-देवियों की प्रस्तर निर्मित प्रतिमायें विद्यमान हैं। छत पर पंच-चुड़ायें हैं। मध्य चूड़ा अन्य चूड़ाओं की अपेक्षा अत्यन्त बड़ा है, जिसके दक्षिण दिशा में श्रीरामकृष्ण की केशवचन्द्र सेन के लीली कॉटेज में खींची गई छवि की प्रतिकृति मूर्ति, पूर्वदिशा में माँ सारदा की मूर्ति, पश्चिम में स्वामीजी की परिव्राजक मूर्ति और उत्तर की ओर भगवान नारायण की चतुर्भुज मूर्ति है। इसके अलावे बाकी चार चूड़ाओं में ईशान कोण (उ.पू.) के चूड़े में स्वामी ब्रह्मानन्द व स्वामी प्रेमानन्द, अग्निकोण (द.पू.) में स्वामी सारदानन्द व स्वामी शिवानन्द, नैऋत्य कोण (द.प.) में स्वामी अद्भुतानन्द व स्वामी तुरीयानन्द तथा वायुकोण (उ.प.) में स्वामी रामकृष्णानन्द व स्वामी त्रिगुणातीतानन्द जी की प्रतिमा अंकित हैं। चारों ओर की दिवारों के ऊपर पट्टिकाओं पर दशमहाविद्या व दशावतार की मूर्तियाँ विद्यमान हैं। पत्र-पुष्पों सहित एक लता चहुँओर से मन्दिर की पट्टिकाओं को आच्छादित किये हुए है, जिसे आगम ग्रन्थों में कल्पलता कहा गया है। चारों चूड़ाओं के नीचे द्वितीय तल के झरोखों पर भी अनेक मूर्तियाँ हैं। उत्तर पूर्व कोण के झरोखे की उत्तरी दिवार पर राधा-कृष्ण, पूर्वी दिवार पर श्रीराम-लक्ष्मण व सीताजी सहित, दक्षिण पूर्व कोण के झरोखे की पूर्वी ओर मकरवाहिनी माँ गंगा व दक्षिणी ओर भिक्षुरूपी शिव को भिक्षादान करती काशीपुराधीश्वरी माँ अन्नपूर्णा, उत्तर पश्चिम कोण के झरोखे में केवल उत्तर की ओर षड्भुज मूर्ति एवं दक्षिण पश्चिम कोण के झरोखे पर केवल दक्षिण ओर विश्वेश्वर महादेव की मूर्ति विराजमान है। सामने की पट्टिका के मध्य में विघ्नहर्ता श्रीगणेश की मूर्ति विराजमान है। इनके अलावा इन झरोखों पर विद्यमान सभी मूर्तियों का आधार विशिष्ट रूप से सूप अथवा वर्णमाला के आकार का है। इसे देखकर यह स्मरण हो जाता है कि किसी भी शुभकर्म के पहले आयोजित वर्णमाला का, जिसके द्वारा मांगलिक कार्यों का आरम्भ होता है। इनके चहुँओर एक प्रकार की लता पत्र-पुष्पों सहित इसे घेरे हुए है। सामने के दोनों झरोखों के शीर्षदेश में दो प्रतीक चिह्न हैं। रामकृष्ण मिशन का स्वामी विवेकानन्द द्वारा परिकल्पित प्रतीक चिह्न अंकित है, इसके माध्यम से ज्ञान, कर्म, भक्ति और योग के समन्वय द्वारा ईश्वर दर्शन को समझाया गया है। पूर्व की ओर रामकृष्ण मिशन द्वारा व्यवहृत संप्रतीक है, तो वहीं पश्चिम की ओर यह संप्रतीक चिह्न ही विपरीत स्वरूप में विद्यमान है। किन्तु कालक्रम में यह विपरीत संप्रतीक रामकृष्ण सारदा मिशन द्वारा उपयोग होने लगा। घण्टी के साथ समन्वित ये संप्रतीक राजस्थानी शैली का परिचायक हैं। गर्भमन्दिर के दोनों दरवाजों के तीनों ओर प्रस्फुटित पद्म सहित लता विद्यमान है। सामने के मुख्य दरवाजे (दक्षिण दरवाजे) के ऊपर सिद्धिदाता भगवान गणेश की एक मूर्ति विद्यमान है तथा नीचे की ओर दोनों ओर गरुड़ और हनुमानजी की प्रणाम मुद्रा में प्रतिमायें विराजमान हैं। यहाँ पर यह विशेष रूप से ध्यान देने योग्य बात है कि भगवान श्रीराम और श्रीकृष्णावतार (भगवान विष्णु के अवतारद्वय) के दोनों अन्तरंग भक्त एक ही स्वरूप में भगवान श्रीरामकृष्ण के द्वारपाल के रूप में नियुक्त हैं। यह देख अनायास ही हनुमानजी के लिए गोस्वामीजी की ये पंक्तियाँ स्मरण हो आती हैं – **'राम दुआरे तुम रखवारे। होत न आज्ञा बिनु पैसारे।'** पूर्व के प्रवेश द्वार के ऊपर मध्यभाग में आदिदुर्गा भगवती जगद्धात्री विद्यमान हैं। शक्तिस्वरूपिणी देवी जगत को धारण करती हैं। गर्भमन्दिर के चारों कोणों के बाहर

मन्दिर के भारवहन के लिए स्तम्भ हैं, वे हाथी की सूड़ के सदृश प्रतीक विशिष्ट हैं। मानो जैसे शक्तिशाली हाथियाँ इस मन्दिर को धारण किए हुए हैं। गर्भमन्दिर के बाह्य दिवार के चतुर्दिक ऊपर एक छोटे पेड़ जैसी माला विद्यमान है।

गर्भगृह के मध्य में एक सुन्दर पद्माकार वेदी के ऊपर भगवान श्रीरामकृष्ण की भावावस्था में बैठी हुई श्वेत संगमर्मर की प्रतिमा है। उसके ठीक सम्मुख वेदी पर ही स्वामी ब्रह्मानन्द जी द्वारा स्थापित श्रीठाकुरजी का एक छोटा आलेख्य (फोटो) एक सिंहासन पर विराजमान है। पूर्व की कुलुंगी (ताखा) पर श्रीमाँ की प्रतिकृति तथा पश्चिम के ताखे पर स्वामीजी की प्रतिकृति सिंहासन पर स्थापित है। अन्य ओर की दिवारों पर छः ताखे और हैं। पश्चिम दिवार के प्रथम ताखा पर माँ काली और महावीर हनुमानजी का चित्र तथा बाणेश्वर शिव और बालगोपाल का विग्रह है। बाकी पाँच ताखों पर ब्रह्मानन्दादि पार्षदों के चित्र विद्यमान हैं।

श्रीरामकृष्ण का संगमर्मर विग्रह और अन्य चित्रों का वैशिष्ट्य एवं शिल्पी परिचय

कलकत्ता स्थित भवानीपुर निवासी सालिसिटिर श्री अचल कुमार मैत्र की धर्मपत्नी की इच्छानुसार भगवान श्रीरामकृष्ण की इस संगमर्मर निर्मित प्रतिमा का निर्माण हुआ था। वे स्वामी ब्रह्मानन्द जी की मंत्र-शिष्या थीं। कलकत्ता के झाउतला रोड स्थित विनायक पाण्डुरंग कर्मकार नामक एक महाराष्ट्रीय शिल्पी द्वारा इस प्रतिमा का निर्माण किया गया था। विनायक पाण्डुरंग कर्मकार नाना साहब कर्मकार नाम से प्रसिद्ध तत्कालीन भारतीय मूर्ति-शिल्पी थे। उन्हें छत्रपति शिवाजी महाराज की मूर्ति-निर्माण के लिए विशेष रूप से जाना जाता है। २ अक्तूबर, १८९१ को उनका जन्म

कोंकण प्रदेश के रायगढ़ जिले के ससावणे गाँव में हुआ था। वे सन् १९१७ के आस-पास से कलकत्ता में थे। वहाँ रहते हुए उनका परिचय रवीन्द्रनाथ टैगोर जैसे लोगों के साथ हुआ था। कलकत्ता निवास के दौरान ही उन्होंने काशी अद्वैताश्रम के मन्दिर में स्थापित ठाकुर जी के विग्रह का निर्माण किया था। कर्मकार मूर्तिकला संग्रहालय मुम्बई से कुछ दूर अलीबाग के पास ससावणे गाँव में उनके घर पर स्थापित किया गया है। उन्हें भारत सरकार द्वारा वर्ष १९६४ में पद्मश्री से सम्मानित किया गया था।

उन्होंने ठाकुरजी के फोटो व प्रत्यक्षदर्शियों के वर्णन का अवलम्बन लेकर सर्वप्रथम एक मॉडल तैयार किया। पूजनीय शरत् महाराज ने स्वामी ब्रह्मानन्द जी को एक बार इस मॉडल को देखकर अनुमोदन करने का निवेदन किया। राजा महाराज, शरत महाराज और कई लोगों के साथ एक दिन स्टूडियो में गये। वहाँ उन्होंने मॉडल में संशोधन हेतु कुछ निर्देश दिए। जैसे ठाकुरजी का कर्ण उनके चक्षुओं से नीचे था और उनके आजानुलम्बित बाहु थे, जिससे बैठने पर भी साधारण मनुष्यों की भाँति झुकना नहीं पड़ता था। स्वाभाविक रूप से उनकी कलाईयाँ जानु पर टिकती थीं। इस तरह के कई संशोधनों के पश्चात् महाराज ने मॉडल का अनुमोदन कर दिया। इसके पश्चात् इटैलियन प्रस्तर पर मूर्ति की खुदाई शुरू हुई। उसी समय पत्थर के भीतर से कुछ काला दाग निकल आया। इसलिये इस सुन्दर प्रतिमा को बेलूड़ मठ में स्थापित करने की योजना निरस्त कर दी गई। सन् १९३६ में जब अद्वैताश्रम में मन्दिर प्रतिष्ठा की तैयारी चल रही थी, तभी चन्द्र महाराज साधुओं के साथ परामर्श करके स्टुडियों से यह प्रतिमा काशी ले आये और सादा तैल लगाकर उसे ही वेदी पर बैठाया। **यही है**

भारत में रामकृष्ण संघ का प्रथम प्रस्तर निर्मित मन्दिर व श्रीरामकृष्ण का प्रथम संगमर्मर-विग्रह।

वेदी के अन्दर एक पात्र में भगवान श्रीरामकृष्ण देव की अस्थियाँ, श्रीमाँ के केश, नख और एक दाँत प्रोत्थित हैं। इसके अलावा इस मन्दिर में श्रीमाँ की अस्थियाँ तथा श्रीचरण पूजा के पुष्प, स्वामी शिवानन्द जी और स्वामी सारदानन्द जी के भस्मावशेष अलग से संरक्षित हैं।

श्रीमाँ सारदा ने अपनी चित्र को स्वयं अपने ही हाथों से सन् १९१२ में प्रथम मन्दिर के ताखे पर स्थापित कर पुष्पादि अर्पित कर कहा था, ''बेटा चन्द्र, इसके बाद से इस पर भी दो पुष्प अर्पित करना।'' उनके स्वहस्त से पूजित यह प्रतिकृति आज भी मन्दिर में पूजित है। स्वामी शिवानन्द जी ने सन् १९०२ में जब आश्रम स्थापित किया था, उसी के दूसरे दिन बेलुड़ मठ से तार मिली कि स्वामीजी ने महासमाधि ले ली है। इस पर उन्होंने कहा, ''तो फिर ठाकुरजी के पास ही स्वामीजी को भी बैठा दूँ।'' उनके पास परिव्राजक रूप में स्वामीजी की एक चित्र था, उसे ही बैठाकर अपने हाथों से पूजा प्रारम्भ कर दी। इस चित्र की अभी भी पूजा होती है। १९२१ में शिवरात्रि के दिन स्वामी ब्रह्मानन्द जी ने पुराने लिथोग्राफ फोटो को बदलकर एक छोटे से पट में ठाकुरजी की प्राणप्रतिष्ठा कर स्थापित किया था। वह चित्र आज भी गर्भगृह में वेदी पर स्थापित और पूजित है।

माँ काली के चित्र की प्रारम्भ से ही स्वामी शिवानन्द जी पूजा करते थे। उस छवि के नष्ट हो जाने पर उनके अनुमोदन से वर्तमान चित्र स्वामी कैवल्यानन्द जी ने स्थापित किया था। महावीर हनुमान जी का चित्र आश्रम के निकटवर्ती क्षेत्र के किसी स्थानीय निवासी ने स्वामी शिवानन्द जी को दिया था। वे उसे पूजा-कक्ष में रखकर पूजा करते थे। बाणेश्वर शिवजी नर्मदा से प्राप्त लिंग है, जिसका अनुमोदन स्वामी ब्रह्मानन्द और स्वामी शिवानन्द जी ने किया था। बालगोपाल का छोटा विग्रह स्वामीजी के शिष्य स्वामी सदाशिवानन्द जी (भक्तराज महाराज) द्वारा व्यक्तिगत रूप से पूजित है, जो उनके देह-त्याग के बाद से मन्दिर में संरक्षित और पूजित है।

मन्दिर प्रतिष्ठा उत्सव

२४ फरवरी, १९३६ को श्रीरामकृष्ण देव की शुभाविर्भाव तिथि थी। उसके साथ उनकी जन्म-शतवार्षिकी भी थी। उसी दिन प्रात: ९:३० बजे स्वामी विज्ञानानन्द जी ने शास्त्र विधानानुसार मन्दिर का लोकार्पण किया। उस दिन मन्दिर-प्रतिष्ठा के निमित्त पूजा, रूद्रयाग, सप्तशती होम और विभिन्न देवताओं की पूजा हुई। रात्रि में काली पूजा, दशमहाविद्याओं की पूजा और काली-कीर्तन हुआ। इस अनुष्ठान में उपस्थित थे – स्वामी धीरानन्द जी, शर्वानन्द जी, अचलानन्द जी, शुभंकरानन्द जी, जगदानन्द जी, शान्तानन्द जी, ॐकारानन्द जी, कैवल्यानन्द जी आदि प्रमुख वृद्ध दिक्पाल संन्यासीगण।

इसके अलावा जन्मशतवार्षिकी उत्सव के उपलक्ष्य में २६ फरवरी को निकटवर्ती टेकरामठ के स्वामी मंगलगिरि जी के नेतृत्व में काशी स्थित सभी सम्प्रदायों के साधुगणों के साथ सम्मिलित होकर समन्वयाचार्य श्रीरामकृष्ण के चित्र के साथ वाद्य आदि सहित शोभायात्रा निकाली गई। छ: मील रास्ता की परिक्रमा तीन घण्टे में की गई। सभी अखाड़ों के महामण्डलेश्वर शोभायात्रा में आगे की ओर और वृद्ध साधुगण बारह मोटर गाड़ियो में गये थे। काशी नरेश ने अपने व्यक्तिगत आरक्षकों को राजकीय परिधान, सज्जा व अलंकृत हाथियों को भेजा था। इसके दूसरे दिन समष्टि भण्डारे का आयोजन हुआ था, जिसमें दो हजार संन्यासियों ने भाग लिया था। विभिन्न सम्प्रदायों का एकत्र सम्मेलन भगवान श्रीरामकृष्ण के समन्वय वार्ता का एक अभूतपूर्व निर्देश था। एक दिन सर्वधर्म-सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसमें भारत-रत्न महामना पंडित मदनमोहन मालवीय जी सहित अन्यान्य पंडितवृंदों ने श्रीरामकृष्ण के 'जितने मत उतने पथ' पर विद्वतापूर्ण व्याख्यान दिये। पंडित प्रमथनाम तर्कभूषण जी द्वारा भागवत पाठ व व्याख्या हुई। अन्तिम दिन २९ फरवरी को धर्मसभा में अध्यक्षीय सम्बोधन महामण्डलेश्वर स्वामी महादेवानन्द गिरी जी ने दिया। अन्य वक्ताओं में स्वामी भागवतानन्द गिरिजी, स्वामी शर्वानन्दजी आदि संन्यासीगण उपस्थित थे।

इस प्रकार साल १९०२ में किराये के मकान में प्रारम्भ हुआ यह आश्रम आज १२१ वर्ष में श्रीरामकृष्ण-विवेकानन्द नव वेदान्त के प्रसार में एक मुख्य स्तम्भ के रूप में खड़ा है। स्वामी ब्रह्मानन्द व शिवानन्द जी द्वारा इच्छित और श्रीरामकृष्ण भावमय स्वामी निर्भरानन्द जी के अथक प्रयासों से निर्मित श्रीरामकृष्ण देव का यह प्रथम मन्दिर प्राय: ८७ वर्षों से काशी में एक अद्‌भुत स्थापत्य का प्रमाण है। ○○○

शान्ति पाने का उपाय

स्वामी सत्यरूपानन्द

पूर्व सचिव, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर

अपने जीवन में उन्नति के लिए कुछ करना चाहिए। हमारे जीवन में दुर्योधन-वृत्ति अधिक है। जैसे मैं ही सब चीजों का मालिक हूँ, सारी सुविधायें मुझे मिले, यह दुर्योधन वृत्ति है। जब हमारे जीवन में अर्जुन की वृत्ति आयेगी, तो समर्पण की बुद्धि आयेगी। जैसे अर्जुन की कृष्ण के प्रति थी।

जीवन में शान्ति कोई नहीं दे सकता। हमारा मन ही हमें शान्ति देगा। ईश्वर की योजना से हमारे भाग्य में जैसी परिस्थिति है, वह हमारे कर्मों के कारण ही है। जीवन में हम शान्ति चाहते हैं, लेकिन हमारे कर्मों के कारण हमारा मन अशान्त रहता है। सुविधाओं से सुख मिलता है, लेकिन शान्ति नहीं मिलती। शान्ति तो ईश्वर को छोड़ कोई नहीं दे सकता। हमारी आत्मा सत्-चित्-आनन्दस्वरूप है। उसमें कभी अशान्ति नहीं आ सकती। यह चाहिये, वह चाहिए, ऐसा करने से मन में अशान्ति आती है। हमें स्वयं सोचना चाहिए कि हमको कुछ नहीं चाहिए। भगवान ने सब कुछ दिया है, किन्तु लोग संसार की ओर देखते रहते हैं, इसलिये उन्हें शान्ति नहीं मिलती। हमें शान्ति पाने के लिए अपनी ओर, अपने भीतर देखना चाहिए, भगवान की ओर देखना चाहिये। किसी ने कहा –

चाह गयी चिन्ता मिटी, मनवा बेपरवाह।
उसको कुछ नहीं चाहिए, जो शाहं का शाह।।

सब कुछ अपने पास होने के बाद भी चाह नहीं मिटती। इसलिए लोग अशान्त हैं। भगवान कहते हैं – **अशान्तस्य कुतः सुखम्**।

शान्ति हेतु आत्मनिरीक्षण करें

शान्ति प्राप्त करने हेतु हम सबको आत्मनिरीक्षण करना चाहिए कि हम अशान्त क्यों हैं? इसके कारणों को जानकर उसे दूर करने का प्रयास करें।

शान्ति का एकमात्र उपाय है कि मन में किसी वस्तु की प्राप्ति की कोई इच्छा न हो, 'मुझे कुछ नहीं चाहिए' यह भाव हो। आराम का सम्बन्ध व्यक्ति से न वस्तु से है। दिनभर में १ घंटा एकदम अकेले रहें। संसार में कुछ आवश्यक कार्य करते रहें, लेकिन थोड़ा समय आत्मनिरीक्षण के लिए निकालें। जिन बातों के लिए दुख नहीं करना चाहिए, उन बातों के लिए हम दुख करते हैं, शोक करते हैं। हमें दुख होता है, जब हमारी प्रिय वस्तु अलग हो जाती है। ऐसा क्यों? जो कुछ हो रहा है, भगवान हमारे मंगल के लिये ही कर रहे हैं, ऐसा भाव हो, तो हमें दुख नहीं होगा। तब हमें शान्ति मिलेगी। हमें कोशिश करनी है कि हमें कैसे शान्ति मिले। सुख-दुख तो आने-जाने वाला है। ये सुख-दुख स्थायी नहीं रहते। कहते हैं, दुख को सहन करो – सहनं सर्वदुःखानां अप्रतिकारपूर्वकम्।

निःस्वार्थ भाव से सेवा करो। परिवार में भी जो व्यक्ति स्वार्थी होता है, उसे कोई चाहता नहीं है, उसे सब अलग कर देते हैं और कलह होता है। जब तुम न रहोगे, तभी तुम सत्य होगे। जब तुममें अहंकार नहीं रहेगा, तभी तुम ठीक-ठीक रहोगे। तुम्हारी आत्मा नित्य सत्य है। अहंकार उसका बोध नहीं होने देता है। अहंकार जाने के बाद हमें अपनी आत्मा का स्मरण होगा। मैं-मरा तो सारा जंजाल मिटा। संसार की सब वस्तुएँ हमें धोखा देनेवाली हैं। अहंकार और आध्यात्मिकता कभी साथ-साथ नहीं रह सकते। मैं-मेरा करने से आध्यात्मिक उन्नति नहीं होती। भगवान उसी पर कृपा करते हैं, जो अपना सर्वस्व त्यागकर व्याकुल होकर प्रार्थना करते हैं। अतः यदि उच्च आध्यात्मिक जीवन बिताना चाहते हो, तो अहंकार त्याग कर भगवान से सबके कल्याण के लिये प्रार्थना करो। तभी मन में शान्ति मिलेगी। ○○○

किसी नये देश में जाना हो तो ऐसे किसी एक व्यक्ति के निर्देशानुसार ही चलना चाहिए, जो वहाँ का रास्ता जानता है। बहुत सारे लोगों से पूछते रहने पर गोलमाल हो जाता है। इसी प्रकार, भगवान के निकट जाना हो, तो उस एक ही गुरु का आदेश मानकर चलना चाहिए, जो उस पथ को भलीभाँति जानते हैं। **– श्रीरामकृष्ण देव**

शिवरात्रि विशेष

शिव-तत्त्व : एक विमर्श

स्वामी संवित् सोमगिरि

'शिव' नाम सुनते ही मन में कर्पूर जैसे गौरवर्ण, देह में भस्म लगाये हुए, बाघाम्बर पहने हुए, सर्पों को आभूषण एवं यज्ञोपवीत की तरह धारण किये हुए, जटाओं में चन्द्रकला को एवं गंगा धारण किये हुए, हाथ में डमरू एवं त्रिशूल लिये हुए, नीले कण्ठ एवं तीन नेत्रवाले दिव्य शरीर का अनायास ध्यान आ जाता है। शिव के साथ ही उनका वाहन श्वेत-धवल वृषभ, उनकी शक्ति पार्वती, उनके पुत्र कार्तिकेय (षडानन–छः मुखवाले) एवं गजानन तथा इन तीनों के वाहन सिंह-मोर एवं मूषक मन-पटल पर उभरते हैं। साधारणतः सिंह से वृषभ को भय होता है, सर्प को मोर से भय है, चूहा सर्प का भोजन है। शिव का भाल-नेत्र अग्निरूप है, दाहिना नेत्र सूर्य है एवं वाम नेत्र चन्द्रमा है, शिव के कण्ठ में विष है, शिव का बायाँ अर्धभाग गौरी-रूप है और वे कामदेव का दहन करनेवाले भी हैं और आश्चर्य यह कि वे विष्णु के मोहिनीरूप पर आसक्त भी हो जाते हैं। श्मशान में क्रीड़ा करनेवाले, भूत-प्रेतगणों के साथ रहनेवाले, कपालों की माला पहने हुए दिगम्बर शिव, अपने भ्रू-विक्षेप से देवताओं को समस्त ऐश्वर्य प्रदान करते हैं।

शिव के रूप में, पहनावे में, चर्या में, व्यवहार में, परिवार में, अनेक विरोधी तत्त्व देखने में आते हैं और वे सभी तत्त्व एक समरस में रहते हैं, क्योंकि शिव स्वयं समरस-मूर्ति हैं। वे अखण्ड-अद्वैत स्वरूप होते हुए समस्त द्वैत को द्वितीया के चन्द्ररूप में अपनी जटाओं में धारण किये रहते हैं। वे द्वन्द्वातीत होकर सभी द्वन्द्वों को अपनाते हैं। शिव की अनन्त करुणा में सभी विरोध, सभी विषमताएँ आश्रय पाकर समरसता की ओर अग्रसर होती हैं। शिव के विभिन्न रूप एवं शिव-लीलाएँ भी रोचक, रहस्यमयी, गूढ़ तथा आश्चर्यमयी हैं एवं शिव-तत्त्व को, शिव महिमा को प्रकट करती हैं।

शिव स्वरूपतः परब्रह्म हैं। वे नित्य शुद्ध-बुद्ध-मुक्त हैं, वे देश-काल-वस्तुपरिच्छेद से रहित हैं, उनमें सजातीय, विजातीय, स्वगतभेद नहीं है। माण्डूक्य उपनिषद में शिव का ओंकाररूप से प्रतिपादन है। इस उपनिषद के सातवें मन्त्र में कहा गया है – 'वह ओंकार न अन्तःप्रज्ञ है, न बहिःप्रज्ञ है, न उभयतः प्रज्ञ है, न प्रज्ञानघन है, न प्रज्ञ है, न अप्रज्ञ है, वह अदृष्ट है, अव्यवहार्य है, अग्राह्य है, अलक्षण है, अचिन्त्य है, अव्यपदेश्य है, एकात्मप्रत्ययसार है, प्रपंचोपशम है, शान्त है, शिव है, अद्वैत है, तुरीय है, आत्मा है, उसको अनुभव कर लेना चाहिए। निर्गुण, निराकार, निष्क्रिय शिव ही अपनी अचिन्त्य, अनिर्वचनीय शक्ति का प्रयोग करके सगुण-निराकार एवं सगुण-साकार बनते हैं। वे ही जीव-जगत् रूप से प्रतिभासित होते हैं। अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए वे ईश्वर कहलाते हैं। वे जगत् की सृष्टि, स्थिति, लय करते हुए क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश कहे जाते हैं। इन तीन कृत्यों के अलावा उनके दो कृत्य और हैं – निग्रह करना अर्थात् जीव को अज्ञान-अवस्था में बाँधकर रखना, अनुग्रह करना अर्थात् जीव को स्वरूप-बोध (मुक्ति) की ओर ले जाना। ये दो कृत्य करते हुए वे क्रमशः ईश्वर एवं सदाशिव कहे जाते हैं। वेद में सृष्टि, स्थिति, लय, निग्रह, अनुग्रह – इन पंचकृत्यों को करनेवाले शिव-रूपों को क्रमशः सद्योजात, वामदेव, अघोर, तत्पुरुष और ईशान कहा गया है। जिस ज्ञान को लेकर शिव पंचकृत्य करते हैं, उनको वेद कहते हैं। वेद परमेश्वर का विवर्त हैं। वेद अनन्त, अनादि, सनातन एवं अपौरुषेय हैं। शिव ने वेद को प्रकट किया और वेद ही शिव स्वरूप के

निर्धारण में परम प्रमाण हैं। वेद में धर्म एवं ब्रह्मतत्त्व का प्रतिपादन है। जिस विधान को लेकर परब्रह्म शिव स्पन्दित होते हैं, पंचकृत्य करते हैं, उसे धर्म कहते हैं। शिव का वाहन नन्दीश्वर वृषभ धर्म है – 'धर्मो वृषः'।

यह अखिल सृष्टि प्रकट होती है और अपनी अवधि पूर्ण होने पर महाप्रलय में लीन हो जाती है। सृष्टि और महाप्रलय का यह क्रम अनादिकाल से चला आ रहा है। महाप्रलय की स्थिति में उस शिव की त्रिगुणात्मिका शक्ति के तीनों गुण (सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुण) साम्य अवस्था में रहते हैं। महाप्रलय की अवधि पूर्ण होने पर जब वह परमेश्वर सृष्टि-उन्मुख होता है, तो त्रिगुणों में विक्षोभ उत्पन्न होता है। तब विशुद्ध सत्त्वगुणवाली प्रकृति से युक्त 'ईश्वर-चैतन्य' एवं मलिन सत्त्वगुणवाली प्रकृति से युक्त 'प्राज्ञ' नामक असंख्य जीव प्रकट होते हैं। तमोगुण–प्रधान प्रकृति से पंच तन्मात्राएँ (शब्द-तन्मात्रा, स्पर्श-तन्मात्रा, रूप-तन्मात्रा, रस-तन्मात्रा, गन्ध-तन्मात्रा) प्रकट होती हैं। इन तन्मात्राओं अर्थात् सूक्ष्म पंचमहाभूतों से तपे हुए स्वर्ण के समान देदीप्यमान अण्डाकार सूक्ष्म ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति होती है। इस सूक्ष्म ब्रह्माण्ड में ही असंख्य जीवों की, अव्यक्त वासनाओं से युक्त हिरण्यगर्भ अर्थात् ब्रह्मा की एक साथ ही विद्युत-प्रभा की तरह अभिव्यक्ति होती है। इसी को मनुस्मृति में बताया गया है –

तदण्डमभवद् हैमं सहस्त्रांशुसमप्रभम्।
तस्मिन् जज्ञे स्वयं ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः।।

वे परब्रह्म ही उपासकों पर कृपा करने के लिए ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सरस्वती, लक्ष्मी, दुर्गा आदि सगुण रूपों में अपने-आपको प्रकट करते हैं एवं नाना प्रकार की लीलाएँ भी करते हैं।

लयकर्ता महेश की पूजा त्रिनेत्रधारी चन्द्रशेखर, जटाजूटधारी गंगाधर, कपाल-माला, नागभूषण-त्रिशूल-डमरूधर के रूप में की जाती है। ये ही नटराज, मृत्युंजय, अर्द्धनारीश्वर आदि रूपों में पूजित हैं। किन्तु लिंगाकृतिरूप में की गयी इनकी पूजा को श्रेष्ठ कहा गया है। लिंग के आधार को जलहरी कहा जाता है। यह ब्रह्मशक्ति का प्रतीक है। कहीं-कहीं मन्दिरों में इस शक्तिपीठ के नीचे विष्णुपीठ एवं उसके नीचे ब्रह्मपीठ की स्थापना की जाती है। भगवान् का वाहन नन्दी है और वह धर्म का प्रतीक है। भगवती सती (दक्ष-कन्या) के पतिरूप से शिव ने दक्ष-यज्ञ-ध्वंस की लीला की एवं पार्वती-पतिरूप में शिव गणेश एवं कार्तिकेय के जनक बने एवं विविध लीलाएँ कीं। आज भी उपासकों के समक्ष प्रभु की लीलाएँ प्रकट होती हैं।

वह परब्रह्म शिव ही जीव बना है एवं वही जगत् बना है। अतः शिव आत्मारूप से भी उपास्य है। उस शिव की अभिव्यक्ति अष्टमूर्तियों के रूप में हुई, यथा पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा एवं आत्मा। इन आठ रूपों में शिव को क्रमशः शर्व, भव, रुद्र, उग्र, भीम, ईशान, महादेव एवं यजमान नाम से जाना जाता है। शाम्भवी महादेव शाम्भवी माया से पार जाने के लिए अष्टमूर्ति उपासना सर्वाधिक उपयुक्त है।

परब्रह्म शिव ने सनक, सनन्दन, सनातन एवं सनत्कुमार को प्रबोधित करने के लिए वटवृक्ष के नीचे अवस्थित हो दक्षिणामूर्तिरूप में उन्हें चिन्मुद्रा दिखायी थी। यह शिव का गुरु-रूप है। आदिगुरु दक्षिणामूर्ति ही ईश्वर, गुरु एवं आत्मा को धारण करनेवाले अखण्ड चैतन्य हैं।

जैसे शिव-शक्ति का अभेद है, वैसे ही हर-हरि का अभेद है। अज्ञ लोग ही शिव एवं विष्णु में भेद करते हैं।

शिव आशुतोष हैं, भोलेनाथ हैं, औढ़रदानी हैं। इनकी उपासना सुकर है। अंजिलभर जल, वन के साधारण फूलों से ये सन्तुष्ट हो जाते हैं। बिल्वपत्र, अर्क (आकड़ा) एवं धतूरे के पुष्प इन्हें विशेष प्रिय हैं। शिव की उपासना में अभिषेक का विशेष महत्त्व है। इसे रुद्राष्टाध्यायी, शतरुद्री, शिव-अथर्वशीर्ष, कैवल्य-उपनिषद् आदि मन्त्रों के उच्चारणपूर्वक जल, फलों का रस, पंचामृत आदि की धारा को शिवलिंग पर डालते हुए सम्पन्न किया जाता है।

प्रत्येक उपास्य देवता के सम्बन्ध में गीता, हृदय कवच, सहस्त्रनाम और स्तोत्र, ये पाँच प्रकार का साहित्य है। 'कवच' देवता का शरीर, 'गीता' शिरोभाग, 'हृदय' देवता का हृदय, 'सहस्त्रनाम' मुख एवं विविध 'स्तोत्र' देवता के चरण माने जाते हैं। इन पंचांगों को अपनाने से उपासना तेजस्वी हो जाती है।

मंत्र-जप एवं ध्यान भी उपासना की पूर्णता के लिए आवश्यक है।

विधिवत् की गयी उपासना सद्यः फलदायिनी होती है। निष्काम भाव से की गयी उपासना से उपासक कैवल्य-मुक्ति पाने का अधिकारी बन जाता है। ○○○

रामगीता (१)

पं. रामकिंकर उपाध्याय

(पं रामकिंकर महाराज श्रीरामचरितमानस के अप्रतिम विलक्षण व्याख्याकार हैं। रामचरितमानस में रस है, इसे सभी जानते हैं और कहते हैं, किन्तु रामचरितमानस में रहस्य है, इसके उद्घाटक 'युगतुलसी' की उपाधि से विभूषित श्रीरामकिंकर जी महाराज हैं। उन्होंने यह प्रवचन रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के पावन प्रांगण में विवेकानन्द जयन्ती के उपलक्ष्य में दिया था। 'विवेक-ज्योति' हेतु इसका टेप से अनुलेखन श्रीराम संगीत महाविद्यालय, रायपुर के सेवानिवृत्त प्राध्यापक श्री राजेन्द्र तिवारी जी और सम्पादन स्वामी प्रपत्त्यानन्द ने किया है। – सं.)

प्रभु श्रीरामभद्र और करुणामयी वात्सल्यमयी, जगज्जननी श्रीसीताजी की अनुकम्पा से पुन: स्वामी विवेकानन्द जी की पावन जयन्ती के अवसर पर इस पावन आश्रम के प्रांगण में, जिसमें आध्यात्मिक साधना के कण निरन्तर सर्वत्र व्याप्त हैं, पुन: यह सुअवसर मिला है। पहले भी अवसर प्राप्त होते रहा है और इस वर्ष भी अवसर मिला है। अभी परम श्रद्धेय स्वामीजी (सत्यरूपानन्द जी महाराज) ने प्रारम्भ में जो संकेत सूत्र आपके सामने रखा और जिस विषय पर उनकी आज्ञा है कि मैं इसी के स्वरूप पर अपना विचार रखने की चेष्टा करूँ। आप समझ गये होंगे कि वे सूत्र और आज का यह विषय कितना गम्भीर है ! वस्तुत: आज की समस्या जटिल है और उस समस्या का कारण और भी जटिल है।

उसका एक मूल सूत्र है व्यक्ति का अधूरा चिन्तन। वह जिस दृष्टि से सोचता है, सुनता है, कहता है, उसका परिणाम यह हुआ है कि उसमें सोचने, समझने और विशेष रूप से सुनने की क्षमता समाप्त जैसी हो गई है। मानो ऐसा प्रतीत होता है कि व्यक्ति की जिज्ञासा की वृत्ति मिट गई है। केवल क्षणिक मनोरंजन ही उसका लक्ष्य रह गया है। ऐसी परिस्थिति में जिन प्रश्नों को स्वामीजी महाराज ने आपके सामने प्रस्तुत किया। वह सचमुच इस महान आश्रम की परम्परा के सर्वथा अनुकूल है। मैं यही चेष्टा करूँगा कि परम श्रद्धेय स्वामीजी ने जिन प्रश्नों की ओर संकेत किया है, उसको दृष्टि में रखकर श्रीरामचरितमानस के माध्यम से उसे रखने का प्रयास करूँ। ऐसे प्रसंग बहुत सरस तो नहीं हो सकते, क्योंकि उसमें विचार और चिन्तन की प्रमुखता होती है। पर मैं चाहूँगा कि आप सब उसे पूरे मनोयोग से सुनें। उसके लिये मैंने एक विशेष प्रसंग को चुना है। प्रसंग तो एक केन्द्र होता है। स्वामीजी महाराज ने जो प्रश्न रखे हैं, मानस में उस पर प्रकाश-डाला गया है।

यह प्रसंग दण्डकारण्य में भगवान राम और लक्ष्मणजी के संवाद के रूप में आता है। भगवान श्रीराम दण्डकारण्य में विराजमान हैं। सर्वथा एकान्त है। वहाँ कोई अन्य विद्यमान नहीं है। ऐसे एकान्त क्षण में श्रीलक्ष्मणजी, जो बहुधा दूर रहकर रक्षा के कार्य में संलग्न रहते हैं, वे प्रभु के समीप आ जाते हैं और प्रभु के चरणों में नमन करते हैं, प्रणाम करते हैं, दण्डवत करते हैं और उनसे कहते हैं कि आज मैं आपसे कुछ प्रश्नों का उत्तर चाहता हूँ, समाधान चाहता हूँ। मैं चाहता हूँ कि जिसको सुनकर शोक, मोह, भ्रम दूर हो जायें और आपके चरणों में प्रीति हो जाये। श्रीलक्ष्मणजी ने जो प्रश्न किए, उस उद्देश्य की ओर संकेत किया और उसमें जिन तीन का नाम लिया, उसे आपने अभी इस पंक्ति में पढ़ा होगा, सुना होगा –

एक बार प्रभु सुख आसीना।
लछिमन बचन कहे छलहीना।।
सुर नर मुनि सचराचर साईं।
मैं पूछऊँ निज प्रभु की नाईं।।
मोहि समुझाइ कहहु सोइ देवा।
सब तजि करौं चरन रज सेवा।।
कहहु ग्यान बिराग अरु माया।
कहहु सो भगति करहु जेहिं दाया।। ३/१३/५-८
ईस्वर जीव भेद प्रभु सकल कहौ समुझाइ।
जातें होइ चरन रति सोक मोह भ्रम जाइ।। ३/१४/०

ये प्रश्न जो श्रीलक्ष्मणजी के द्वारा किये गये और जिसका उत्तर देते हुए भगवान श्रीराम ने श्रीलक्ष्मण से जो वाक्य

कहे, वे बड़े महत्त्व के हैं। प्रभु ने यही कहा कि लक्ष्मण! मैं संक्षेप में ही तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर दूँगा, पर उसे सावधान होकर सुनो –

सुनहु तात मति मन चित लाई। ३/१४/१

तुम मन, बुद्धि और चित्त, तीनों को लगाकर उसे सुनो। अद्‌भुत दृश्य है। भूमि दण्डकारण्य की है, किन्तु दण्डकारण्य की यह भूमि बड़ी जटिलताओं से भरी हुई है। अब तक भगवान श्रीराम ने जिन स्थानों में निवास किया है, वे एक भिन्न प्रकार के स्थान हैं। प्रभु अवध की पावन भूमि में जन्म लेते हैं, जहाँ महात्मा, भक्तिपरायण, कर्मयोगी विद्यमान हैं। अयोध्या अपने आप में ही एक दिव्य धाम है। उसके पश्चात् प्रभु मिथिला की ओर प्रस्थान करते हैं। मिथिला वह भूमि है, जिसमें महानतम तत्त्वज्ञ, ज्ञानी, कर्मयोगी, राजर्षि जनक जी महाराज विराजमान हैं। वहाँ भगवान श्रीराम का जनक-नन्दिनी श्रीसीताजी से मंगल परिणय होता है। बड़े आनन्द रस का यह प्रसंग है। लोगों को बड़ा सम्मोहित करता है। उसके पश्चात् जब भगवान श्रीराम को वन जाने की आज्ञा दी जाती है, तो जिस वन में वे निवास करते हैं, वह चित्रकूट इतना अद्‌भुत है, दिव्य है कि वह अयोध्या और मिथिला की अपेक्षा भी अधिक आनन्द की सृष्टि करनेवाला है।

इसके बाद भगवान चित्रकूट में रहे। जहाँ रहकर भगवान राम, लक्ष्मण और श्रीसीताजी बहुत प्रसन्न हैं। श्रीसीताजी के लिए लिखा गया कि उन्हें कभी स्मृति आती ही नहीं अयोध्या और मिथिला की। लक्ष्मणजी को तो किसी की स्मृति नहीं आती। ये जो तीन भूमियाँ हैं, जिनमें भगवान श्रीरामकी लीलाएँ सम्पन्न हुई हैं, सभी अपनी-अपनी दृष्टि से अनोखी हैं, बड़ी विलक्षण हैं।

पर भगवान राम जब चित्रकूट छोड़कर दण्डकारण्य की ओर प्रस्थान करते हैं, तो दण्डकारण्य की भूमि इन तीनों के समान नहीं है। यह जो दण्डकारण्य की भूमि है, यह बड़ी शापित भूमि मानी जाती थी। बड़ी अपवित्र भूमि मानी जाती थी, क्योंकि यहाँ के राजा के द्वारा मुनि-पुत्र से जिस प्रकार से व्यवहार किया गया, वह अत्यन्त निन्दित था। मुनि ने क्रोध में आकर राजा को शाप दे दिया और शाप देने के साथ-साथ यह भी कहा कि यह भूमि अत्यन्त अपवित्र और अकल्याणकारी हो जायेगी।

जब भगवान श्रीराम चित्रकूट की उस मनोहारी भूमि को छोड़कर दण्डकारण्य में निवास करने का विचार करते हैं, तो इसके पीछे प्रभु की लीला का एक विशेष उद्देश्य था और उस उद्देश्य में मानो यह प्रश्नोत्तर अपेक्षित था, आवश्यक था। उसके वक्ता और श्रोता अब उनके लिये क्या कहा जाये, जहाँ स्वयं भगवान ही व्याख्या कर रहे हों और लक्ष्मणजी जैसा महान श्रोता हो। लक्ष्मणजी का महानतम चरित्र है। उन्हें घनीभूत वैराग्य की संज्ञा दी गई है –

सानुज सीय सहित प्रभु राजत परन कुटीर।
भगति ग्यानु बैराग्य जनु सोहत धरें सरीर।। २/३२१/०

ऐसे दो विलक्षण विशेषण हैं लक्ष्मणजी के। अब इससे अधिक श्रोता-वक्ता की श्रेष्ठता की कल्पना नहीं की जा सकती। आइए, केवल सांकेतिक अर्थों में उन तीनों भूमियों पर थोड़ा विचार करें। व्यापक अर्थों में तो उनकी व्याख्या करना कठिन है। स्वयं अपने आप में उनकी अपनी विलक्षणताएँ हैं, पर इतना ही यहाँ पर ले लें कि गोस्वामीजी चित्रकूट की भूमि को चित्त मानते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि भूमि का एक रूप वह है, जो बाहर भूगोल में होता है और इस भूमि का एक रूप वह होता है, जो आपके और हमारे अन्त:करण में होता है। बाहर के भूगोल की यात्राएँ तो व्यक्ति बहुत बार करता है, लेकिन कैसी अनोखी बात है, अपने भीतर की यात्रा व्यक्ति बहुत कम बार कर पाता है या करता ही नहीं है। पर उसको संक्षेप में सूत्र रूप में इतना ले लें कि जब वे चित्रकूट की बात करते हैं, तो वह दोहा आपके ध्यान में गया होगा और जाना चाहिए, जिसमें कहा गया –

राम कथा मंदाकिनी चित्रकूट चितचारू।
तुलसी सुभग सनेह बन सिय रघुबीर बिहारू।। १/३१/०

यहाँ कहा गया, जब हमारे अन्त:करण में रामकथा की दिव्य धारा प्रवाहित होती है, तो वही मानो मन्दाकिनी नदी है। जब व्यक्ति प्रेमपूर्वक उसमें अवगाहन करता है, तो यही मानो चित्रकूट का वन है। उसके साथ-साथ चित्रकूट के केन्द्र में जो कामदगिरि पर्वत है, जिनकी यात्री परिक्रमा करते हैं, जिनकी बड़ी महिमा है, उनके लिए गोस्वामीजी कहते हैं, वह चित्त है। अचल चित्त ही चित्रकूट है। मन्दाकिनी राम कथा है। वन प्रेम है। जैसे चित्रकूट में यह पढ़ने को मिलता है कि भगवान राम श्रीसीताजी और लक्ष्मण के साथ निवास करते हैं। इसी प्रकार जब कोई व्यक्ति चित्त की इस स्थिति

में कथा श्रवण करता है, उसमें डूबता है, उसमें तदाकार होता है, तो उसके जीवन में, उसके हृदय में ही श्रीराम, सीता और लक्ष्मण का विहार होने लगता है।

यह दण्डकारण्य क्या है? दण्डकारण्य को गोस्वामीजी कहते हैं, यह जो जीव का मन है, वही दण्डकारण्य है। उसके लिए आप उस चौपाई की ओर ध्यान देंगे, जहाँ पर गोस्वामीजी नाम-वन्दना में रामायण के बहिरंग रूप और अन्तरंग रूप की तुलना करते हैं। उसमें वे कहते हैं –

दंडक बनु प्रभु कीन्ह सुहावन।

जन मन अमित नाम किए पावन।। १/२३/७

प्रभु ने चित्रकूट में रहते-रहते यह अनुभव किया कि चौदह वर्ष का यह जो वन का प्रवास है, वह तो अत्यन्त आनन्ददायी है और बड़े आनन्द से ये दिन व्यतीत किये जा सकते हैं। लेकिन उनका उद्देश्य तो केवल आत्मसुख, केवल अपने आनन्द का नहीं था, स्वयं सुख से समय को बिता देना नहीं था। भगवान राम का अवतार तो हुआ था, जो संसार के सामने समस्या थी और जो विकृति थी, जो राक्षसों के रूप में दिखाई देती थी, उसका समाधान करने के लिये। अन्त में प्रभु यह निर्णय लेते हैं और महर्षि अत्रि जो चित्रकूट के प्रमुख महापुरुष महात्मा हैं, जहाँ पतिव्रता अनसूया निवास करती हैं, भगवान राम उनके चरणों में प्रणाम करते हैं और उनसे आज्ञा माँगते हैं –

आयसु होइ जाउँ बन आना। ३/५/२

आपकी आज्ञा हो, तो अब मैं दूसरे वन की ओर जाऊँ। बड़ी दुविधा का अनुभव करते हैं महर्षि अत्रि। भगवान से यह कहना बड़ा कठिन है कि अच्छा, अब आप पधारिए, विदा होइए। विशेष रूप से यह भी नहीं कि उनके आश्रम में टिके हुए हों, तो उन्हें कुछ असुविधा हो रही हो, उनको कोई सेवा का भार उठाना पड़ रहा हो। इसीलिए उन्होंने कहा कि यह बड़ा कठिन प्रश्न है।

केहि बिधि कहौं जाहु अब स्वामी। ३/५/९

मैं यदि यह कहूँ कि आप जाइए, तो इससे बढ़कर तो कोई निष्ठुरता, स्नेहविहीनता का कोई वाक्य नहीं हो सकता। यदि मैं आपको रुकने के लिये कह दूँ, तो आपका जिस महान उद्देश्य के लिए अवतार हुआ है, उसकी पूर्ति में बाधा उत्पन्न होती है। प्रभु आशीर्वाद लेते हैं। अनसूयाजी से किशोरीजी दिव्य आभूषण-वस्त्र प्राप्त करती हैं और भगवान वहाँ से प्रस्थान करते हैं।

अब दण्डकारण्य का पूरा वर्णन यदि आप पढ़ें, तो स्पष्ट दिखाई देता है कि चित्रकूट में कोई ऐसा व्यक्ति, कोई ऐसा दृश्य, कोई ऐसा पशु और पक्षी नहीं है, जिसने प्रभु को कष्ट देने की चेष्टा की हो। इस यात्रा का प्रारम्भ ही जब होता है, तब वह बड़ा अनोखा है। गोस्वामीजी कहते हैं कि भगवान ज्यों ही चलते हैं, चित्रकूट की यात्रा में कोई ऐसा दुराचरण वाला राक्षस नहीं आया, लेकिन दण्डकारण्य के पथ पर चलते ही प्रारम्भ में ही कबन्ध मिलता है, विराध मिलता है। सबसे पहले प्रभु विराध का वध करते हैं। विराध का वध करने के पश्चात् भगवान उस वन में निवास करते हैं और उस वन में ही भगवान राम के जीवन का वह पक्ष आता है, जो बड़ा करुण है, व्यावहारिक अर्थों में देखें, तो बड़ा दुखमय है, जहाँ जनकनन्दिनी श्रीसीता से भगवान राम का वियोग होता है। चित्रकूट में सबका मिलन हुआ था। श्रीभरत का श्रीराम से मिलन हुआ था। जनक, गुरु वशिष्ठ अयोध्यावासी, मिथिलावासी, सब चित्रकूट में एकत्र हुए थे। लेकिन दण्डकारण्य में सब कुछ ऐसा हो गया, कैसी विचित्र स्थिति थी, जब श्रीसीताजी का श्रीराम से वियोग हुआ ! वे वन में लता-वृक्षों से जानकीजी का पता पूछते हुए, आँसू बहाते हुए, व्याकुल होकर घूम रहे हैं। फिर इसी यात्रा में भगवान को दूसरा राक्षस कबन्ध मिलता है। इसके भी अन्तराल में पहले, जनकनन्दिनी सीता के हरण के पहले खरदूषण वध, सूर्पणखा का विरूपीकरण, कबन्ध का वध, ये सब चरित्र सामने आते हैं। उसके पश्चात् जब वे जनकनन्दिनी सीता की खोज में चलते हैं, तब उस मार्ग में भी उनको एक ऐसा विलक्षण राक्षस मिलता है, जो सिर रहित है, जिसका नाम कबन्ध है। कबन्ध का भी प्रभु वध करते हैं। इसी के बाद इसी क्रम में भगवान राम शबरी, जिनके प्रेम और भक्ति की जितनी भी महिमा गाई जाये, वह कम है, उनके आश्रम में जाते हैं। भगवान श्रीराम का जो स्वागत शबरीजी ने किया और जिनके फलों का आस्वादन करके प्रभु अघाते नहीं हैं, बार-बार उनसे फलों की याचना करते हैं, माँगते हैं। भगवान श्रीराम जिन्हें नवधा भक्ति का उपदेश देते हैं। उनसे प्रश्न करते हैं कि आप तो बड़ी दिव्य भक्तिमयी हैं। सीताजी का मुझसे वियोग हो गया

शेष भाग पृष्ठ १३५ पर

आत्म-संघर्ष

श्रीमती मिताली सिंह, बिलासपुर

बच्चो, हम सभी मार्च के महीने में मनाया जानेवाला अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस के उपलक्ष्य में एक ऐसी महिला के बारे में जानेंगे, जिसने अपने जीवन के संघर्षों का सामना करते हुए दूसरों के जीवन में प्रकाश लाया।

मारियो क्रिस्टिना जब केवल २ वर्ष की थी, तब उसकी माँ उसे अपनी एक सहेली क्रिस्टिना के पास ले गयी और कहा कि मेरे पास कोई काम नहीं है? मैं अपनी बेटी को कैसे पालूँगी? तुम इसे अपने पास रख लो। क्रिस्टिना, जिसके पहले से ही ६ बच्चे थे, ने कहा 'मैं तो सफाई का काम करके अपने बच्चों को पाल रही हूँ। मैं विधवा हूँ और एक रिफ्यूजी (अंगोला कैप की) हूँ। तुम अपने देश वापस चली जाओ, वहाँ काम करना। मैं तुम्हारी बच्ची का लालन-पालन करूँगी। जहाँ ६ रह रहे हैं वहाँ ७ भी रह जायेंगे।' तब से मारियो क्रिस्टिना के पास रहने लगी है, जब मारियो मात्र १२ वर्ष की हुई, तब उसका विद्यालय छूट गया, क्योंकि उसको पालने वाली माँ (क्रिस्टिना) कैंसर के कारण मर गयी। उसने अपने अन्य भाई-बहनों के लिए कार्य करना आरम्भ किया।

१८ वर्ष की उम्र में मारियो ने पुर्तगाल छोड़ दिया। उसने अंग्रेजी, फ्रेंच, पुर्तगाली भाषा सीखी और ८ वर्ष बाद उसे अमीरात एयरलाईन में नौकरी मिल गई। जब वह अमीरात एयरलाईन में नौकरी के लिए इंटरव्यू देने गई थी, तब केवल २ ही पद थे। उसके लिये १०० उम्मीदवार पहुँचे थे, जिसमें उसका चयन हुआ।

१ वर्ष बाद एयर अमीरात ने उसे बांग्लादेश भेजा। वहाँ उसने गरीबों को और भी नजदीक से देखा। जहाँ बच्चों के जन्म होने पर जन्म प्रमाण-पत्र तक नहीं बनता था, यदि वहाँ लड़का जन्म ले, तो अधिक से अधिक चौथी तक पढ़ता और लड़कियों के लिए वह भी आवश्यक नहीं था। वहाँ उन बच्चों को मारियो ने जब पढ़ाई के विषय में पूछा, तो आश्चर्यचकित हो गई, क्योंकि गरीबी के कारण किसी भी विद्यालय में इन बच्चों का नामांकन नहीं होता। तब मारियो ने एक विद्यालय खोला। सामान्य पढ़ाई के साथ-साथ व्यावसायिक शिक्षा भी देना आरम्भ किया। ३ वर्ष के अन्दर करीब ६०० बच्चे इसके विद्यालय में सम्मिलित हो चुके थे। इसके ३ वर्ष के बाद मंदी का दौर आया और इनके सारे प्रायोजक इन्हें छोड़कर जाने लगे। आर्थिक स्थिति बदतर होती जा रही थी। फिर वह गूगल पर कम-से-कम समय में दान बढ़ाने के तरीके ढूँढ़ने लगी। बहुत प्रकार के सुझाव मिले, परन्तु हल नहीं निकला। फिर उसने एक लेख पढ़ा, जिसमें लिखा था कि इंग्लैंड के एक समूह जो कि नार्थ-पोल होकर आया है, उसे २ मिलियन पाउण्ड मिला है। क्रिस्टिना को मालूम हुआ कि अभी तक केवल २ पुर्तगाली ही ऐसी चढ़ाई कर सके हैं। सातिया (भारतीय) ने कहा कि वह उसे मात्र २ वर्ष में ट्रेंड कर देंगे। पर मारियो ने कहा, मेरे पास इतना समय नहीं है, मुझे कम-से कम समय में यह करना है। काफी समझाने पर सातिया ने मात्र ६ हफ्ते में उसे ट्रेंड कर दिया। माउंट एवरेस्ट पर चढ़ाई करने वाली मारियो क्रिस्टिना पहली पुर्तगाली महिला बन गई।

२०१४ से २०१७ तक वह अपने को इतना बदली कि उसने ८ गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड दर्ज किये। जिसमें ७ महाद्वीपों में, ४ बार मैराथन में, पैरामेराथन में, आयरन मैन आदि में कम समय में खिताब अपने नाम किया। साऊथ पोल (दक्षिण ध्रुव) तैराकी में इंग्लिश चैनल (इंग्लैंड से फ्राँस) पार कर रिकॉर्ड बनाया। यह सब करने का उसका उद्देश्य था, अपने सपनों के विद्यालय के लिये, उन गरीब बच्चों के लिये दान एकत्रित करना।

आज जब मारियो से पूछा जाता है, आपको सबसे अधिक परिश्रम एवरेस्ट की चढ़ाई में, विश्व रिकॉर्ड बनाने में, तैराकी में, किसके लिए करनी पड़ी। तो उसने कहा कि मुझे सबसे अधिक परिश्रम अपने इस संस्था को जीवित रखकर उसे चलाने में आयी। मारियो क्रिस्टिना आज ३३ वर्ष बाद पुर्तगाल की एक बड़ी हस्ती बन गई हैं। वे स्वयं में अपने उस माँ को देखती हैं, जिसने उन्हें गरीबी में भी पालन-पोषण करके सफल बनाया था। ○○○

श्रीशिवताण्डवस्तोत्रम्

श्रीरावण

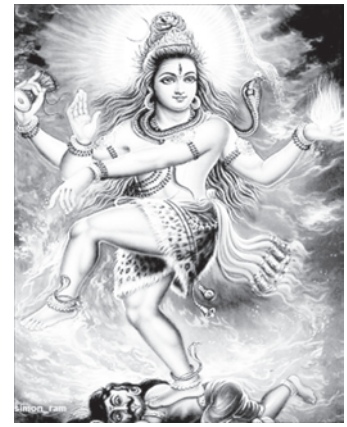

जटाटवीगलज्जलप्रवाहपावितस्थले
गलेऽवलम्ब्य लम्बितां भुजङ्गतुङ्गमालिकाम्।
डमड्डमड्डमड्डमन्निनादवड्डमर्वयं
चकार चण्डताण्डवं तनोतु नः शिवः शिवम्।।१।।

– जटारूपी सघन वन से निःसृत (गंगा के) जलप्रवाह से पुनीत हुए कण्ठ में सर्पों की लटकती लम्बी माला धारण करके डमड् डमड् डमड् नादकारी डमरू बजाते हुए जिन्होंने प्रचण्ड ताण्डव नृत्य किया, वे भगवान् शंकर हमारी मंगलवृद्धि करें।।१।।

जटाकटाहसम्भ्रमभ्रमन्निलिम्पनिर्झरी –
विलोलवीचिवल्लरीविराजमानमूर्धनि
धगद्धगद्धगज्ज्वल्ललाट–पट्टपावके
किशोरचन्द्रशेखरे रतिः प्रतिक्षणं मम।।२।।

– कटाह (कड़ाही) अथवा ढूह (टीले) के समान आकारित (जिनकी) जटाओं में उलझकर (वेगपूर्णक) घूर्णायमान देवनदी भागीरथी की चंचल तरंगरूपी लताओं से जिनका मस्तक सुशोभित है, जिनका विशाल ललाट धकधकाती जाज्ज्वल्यमान अग्नि से प्रकाशित है एवं मस्तक पर नवीन (वर्द्धमान) चन्द्ररूपी शिरोभूषण धारण किया है, उन महादेव के प्रति मेरी प्रतिक्षण भक्ति हो।।२।।

धराधरेन्द्रनन्दिनीविलासबन्धुबन्धुर-
स्फुरद्दिगन्तसन्ततिप्रमोदमानमानसे
कृपाकटाक्षधोरणीनिरुद्धदुर्धरापदि
क्वचिद्दिगम्बरे मनो विनोदमेतु वस्तुनि।।३।।

पर्वतश्रेष्ठ हिमालय की कन्या सहित लीला-क्रीड़ा करते हुए अतिसुन्दर दिखती हुई दसों दिशाओं की अतिरमणीय आभा से जिनका मन आनन्दित हुआ है, जिनके कृपाकटाक्ष से भक्तों के अति घोर संकट भी सर्वदा के लिए अवरुद्ध हो जाते हैं, उन दिगम्बर (ब्रह्म-तत्त्व) भगवान शंकर में कभी तो मेरा मन आनन्दित हो।।३।।

जटाभुजङ्गपिङ्गलस्फुरत्फणामणिप्रभा-
कदम्बकुङ्कुमद्रवप्रलिप्तदिग्वधूमुखे
मदान्धसिन्धुरस्फुरत्त्वगुत्तरीयमेदुरे
मनो विनोदमद्भुतं बिभर्तु भूतभर्तरि।।४।।

अपनी पिंगलवर्ण जटाओं में (विराजमान) सर्पों के फणों पर स्थित मणियों की देदीप्यमान स्वर्णिम एवं केशरी प्रभावरूपी द्रव से जिन्होंने मानो दिशारूपिणी वधुओं के मुखण्डल को कुंकुम से रंजित कर दिया है तथा जिन्होंने मदोन्मत्त हाथी के चर्म को लहराते उत्तरीय के रूप में धारण किया है, उन सर्व प्राणीचालक श्रीमहादेवजी में मेरा मन अद्भुत आनन्द अनुभव करे।।४।।

सहस्रलोचनप्रभृत्यशेषलेखशेखर
प्रसूनधूलिधोरणी विधूसराङ्घ्रपीठभूः।
भुजङ्गराजमालया निबद्धजाटजूटकः
श्रियै चिराय जायतां चकोरबन्धुशेखरः।।५।।

– जिनके चरण रखने की आधारभूमि (चरणों में अवनत) इन्द्रादि समस्त देवगणों के मुकुटस्थित पुष्पों के विस्तीर्ण पराग से सुमण्डित है, जिन्होंने शेषनाग-(अर्थात् अनन्त, वासुकी) रूपी हार से अपना जटाजूट बाँधा हुआ है तथा जिन्होंने चकोर पक्षी के मित्र चन्द्र को अपने मस्तक पर धारण किया है, वे सदाशिव चिरकाल तक हमारे ऐश्वर्य के कारण बने रहें।।५।।

ललाटचत्वरज्वलद्धनञ्जयस्फुलिङ्गभा-
निपीतपञ्चसायकं नमन्निलिम्पनायकम्।
सुधामयूखलेखया विराजमानशेखरं
महाकपालि सम्पदे शिरो जटालमस्तु नः।।६।।

– ललाटरूपी यज्ञभूमि पर प्रज्वलित धनंजय नामक अग्नि के स्फुलिंग के तेजमात्र से जिन्होंने पंचबाणधारी कामदेव को शोषित कर डाला, जो सर्व देववन्दित तथा चन्द्रमा की अमृतमयी कान्तिरेखा(-कला) से सुशोभित हैं, (शंकर का) जटाजूट-मण्डित वह विशाल मस्तक हमारी सम्पन्नता का कारण हो।।६।।

करालभालपट्टिकाधगद्धगद्धगज्ज्वल-
द्धनञ्जयाहुतीकृतप्रचण्डपञ्चसायके।
धराधरेन्द्रनन्दिनीकुचाग्रचित्रपत्रक-
प्रकल्पनैकशिल्पिनि त्रिलोचने रतिर्मम।।७।।

– अपनी विकराल कपाल-पटल (रूपी यज्ञभूमि) पर धधकती (धनंजय नामक) अग्नि में शक्तिशाली पंचबाणों के धारक कामदेव की आहुति देनेवाले तथा पर्वतराज-कन्या के वक्षस्थल (हृदय) पर चित्रभंगी के एकमात्र रचनाशिल्पी त्रिनयन शिव में मेरी भक्ति हो।।७।।

नवीनमेघमण्डलीनिरुद्धदुर्धरस्फुर -
त्कुहूनिशीथिनीतमः प्रबन्धबद्धकन्धरः।

निलिम्पनिर्झरीधरस्तनोतु कृत्तिसिन्धुरः
कलानिधानबन्धुरः श्रियं जगद्धुरन्धरः।।८।।

– (विषपान के कारण) नील हुई जिनकी ग्रीवा, जब घनी जटाओं से घिर कर शोभायमान होती है, तो वह अमावस्या की रात्रि में घिरे हुये नवीन मेघमण्डल के कारण वृद्धिगत घनान्धकार को भी मात कर देती है, गजचर्मधारी, समस्त कलाओं के ज्ञान से सौन्दर्यघन (अथवा भालचन्द्र), सकल जगत् के भारधारी (अर्थात् पोषक), देवनदी गंगा के धारक शिव हमारे वैभव को बढ़ायें।।८।।

प्रफुल्लनीलपङ्कज-प्रपञ्चकालिमप्रभा-
वलम्बिकण्ठकन्दली-रुचिप्रबद्धकन्धरम्।
स्मरच्छिदं पुरच्छिदं भवच्छिदं मखच्छिदं
गजच्छिदान्धकच्छिदं तमन्तकच्छिदं भजे।।९।।

– (कन्धों पर फैली जटाओं की) घनमेघ तुल्य शोभा से व्याप्त कदलीस्तम्भ सदृश जिनके सुन्दर कण्ठ की परम रमणीय कान्ति पूर्ण विकसित नील कमल की चतुर्दिक प्रसरित श्यामल आभा के समान है, उन कामदेव-भस्मकारी, त्रिपुरनाशकारी, संसार(-सागर) के अन्तकारी, दक्षयज्ञविध्वंसकारी, गजासुरसंहारक, अन्धकासुरमारक एवं मृत्यु-रूपी यमराज के अथवा जन्म-मरण के मूलोच्छेदक श्री शिव को मैं भजता हूँ।।९।।

अखर्वसर्वमङ्गलाकलाकदम्बमञ्जरी -
रसप्रवाहमाधुरीविजृम्भणामधुव्रतम्।
स्मरान्तकं पुरान्तकं भवान्तकं मखान्तकं
गजान्तकान्धकान्तकं तमन्तकान्तकं भजे।।१०।।

– ठिगनेपन अथवा किसी भी अल्पता अथवा न्यूनता से रहित सर्वमंगला देवी पार्वती की कदम्बपुष्प-तुल्य (सर्व मंगलदायिनी) कलसमूह-मंजरी से निर्झरित मधुर एवं विशद मकरन्द (अर्थात् सर्वकला-प्रवीणता) के आस्वादन के व्रतधारी, कामनाशक, त्रिपुर-असुरविनाशक, संसारचक्र-नाशक तथा मृत्यु के उच्छेदक श्रीशंकर को मैं (अन्तःकरण से) भजता हूँ।।१०।।

जयत्वदभ्रविभ्रमभ्रमद्भुजङ्गमश्वस -
द्विनिर्गमत्क्रमस्फुरत्करालभालहव्यवाट्।
धिमिद्धिमिद्धिमिद्ध्वनन्मृदङ्गतुङ्गमङ्गल-
ध्वनिक्रमप्रवर्तितप्रचण्डताण्डवः शिवः।।११।।

– शरीर को अनेक प्रकार से वेगपूर्वक चलायमान करने पर मस्तक में लिपटे सर्पों के फुत्कार से और भी अधिक स्फुरित हुई भयंकर अग्नि को अपने कपाल पर धारणकारी तथा मृदंग के 'धिमि धिमि धिमि धिमि' नाद के उच्च मंगलघोष की क्रमवर्धित ताल के साथ-साथ अपने प्रचण्ड ताण्डव नृत्य की गति को बढ़ानेवाले श्रीशिव की जय हो।।११।।

दृषद्विचित्रतल्पयोर्भुजङ्गमौक्तिकस्रजो-
र्गरिष्ठरत्नलोष्ठयोः सुहृद्विपक्षपक्षयोः।
तृणारविन्दचक्षुषोः प्रजामहीमहेन्द्रयोः
समप्रवृत्तिकः कदा सदाशिवं भजाम्यहम्।।१२।।

– शिलातल तथा चित्र-विचित्र कोमल शय्या में, सर्प तथा मोतियों की माला में, अति उत्कृष्ट बहुमूल्य रत्न तथा मिट्टी के ढेले में, मित्र तथा शत्रु में, तुच्छ तृण तथा कमल के समान नेत्रों में एवं प्रजा तथा चक्रवर्ती सम्राट में, अर्थात् ऐसे समस्त परस्पर विरुद्ध लौकिक विषयों के सम्बन्ध में समवृत्ति रखनेवाला बनकर मैं श्रीसदाशिव का भजन कब करूँगा?।।१२।।

कदा निलिम्पनिर्झरीनिकुञ्जकोटरे वसन्
विमुक्तदुर्मतिः सदा शिरःस्थमञ्जलिं वहन्।
विलोललोललोचनो ललामभाललग्नकः
शिवेति मन्त्रमुच्चरन् कदा सुखी भवाम्यहम्।।१३।।

– सुन्दर लालाट वाले शिव में दत्तचित्त होकर, सम्पूर्ण दुर्वासनाओं से मुक्त होकर, मस्तक पर अंजलि बाँधे, देवनदी गंगा के तट पर लताकुंज में किसी वृक्ष की खोखर में निवास करते हुए अतिशय उत्सुकतापूर्वक डबडबाये नेत्रों से (अथवा अपने लालाट पर तिलक धारण किये) मैं 'शिव' मन्त्र का उच्चारण करते हुए कब सुखी होऊँगा?।।१३।।

इमं हि नित्यमेवमुक्तमुत्तमोत्तमं स्तवं
पठन् स्मरन् ब्रुवन्नरो विशुद्धिमेति सन्ततम्।
हरे गुरौ सुभक्तिमाशु याति नान्यथा गतिं
विमोहनं हि देहिनां सुशङ्करस्य चिन्तनम्।।१४।।

– इस प्रकार से उक्त इस उत्तमोत्तम स्तोत्र का नित्यपाठ, स्मरण तथा गायन करनेवाला (भक्त) मनुष्य सर्वदा शुद्धि प्राप्त करता है, गुरुरूप भगवान शंकर के प्रति तुरन्त उत्तम भक्ति को प्राप्त करता है तथा अन्य किसी निकृष्ट गति को प्राप्त नहीं होता, क्योंकि श्रीशिव का चिन्तन देहधारी मनुष्यों का मोह-काम-नाश करनेवाला है।।१४।।

पूजावसानसमये दशवक्त्रगीतं
यः शम्भुपूजनपरं पठति प्रदोषे।
तस्य स्थिरां रथगजेन्द्रतुरङ्गयुक्तां
लक्ष्मीं सदैव सुमुखी प्रददाति शम्भुः।।१५।।

– पूजा की समाप्ति पर दशानन रावण द्वारा गाये गए शिवपूजन सम्बन्धी इस स्तोत्र का जो प्रदोषकाल में पाठ करता है, उसे भगवान् शम्भु रथों, हाथियों तथा घोड़ों से युक्त सदा अनुकूल रहनेवाली वैभवलक्ष्मी प्रदान करते हैं।।१५।। ○○○

श्रीराम और श्रीरामकृष्ण

स्वामी निखिलात्मानन्द

(ब्रह्मलीन स्वामी निखिलात्मानन्द जी महाराज, प्रयागराज, नारायणपुर, जयपुर के सचिव थे। उन्होंने यह व्याख्यान श्रीरामकृष्ण आश्रम, अमरकंटक में दिया था, जिसे विवेक-ज्योति पत्रिका के पाठकों हेतु प्रकाशित किया जा रहा है।)

भगवान श्रीराम आते हैं हजारों वर्ष पूर्व और भगवान श्रीरामकृष्ण देव आज से १७५ वर्ष पूर्व इस कलियुग में आते हैं। दोनों महापुरुषों के जीवन में हजारों वर्षों का अन्तराल है। फिर भी इनमें हम समानता के सूत्र देख पाते हैं। उसी पर विचार करने का प्रयास किया जायेगा। ये जितने भी अवतारी महापुरुष आते हैं, इसलिए आते हैं कि हम अपने दिव्य स्वरूप को पहचानें। हम अपने आप को भूले हुए हैं। हम अपने आप को शरीर समझते हैं, मन समझते हैं, बुद्धि समझते हैं। इसलिये भगवान नर-देह धारण करके यह दिखाने के लिए ही आते हैं कि हम उसी भगवान के ही अंश हैं, किन्तु अपने आप को भूले हुए हैं। भगवान इस युग में आते हैं और आकर हमारे जैसा ही दुख, कष्ट इस जीवन में झेलते हैं ! हम दुख, कष्ट पाते हैं, तो निराश हो जाते हैं, किन्तु भगवान अपने जीवन के माध्यम से आकर के दिखा जाते हैं कि कैसे इन कष्टों के भी पार जाया जा सकता है, कैसे उन कष्टों को झेलते हुए भी परमानन्द की प्राप्ति की जा सकती है ! यही दिखाने के लिए प्रभु का अवतरण होता है। इसे श्रीरामकृष्ण बंगला भाषा में कहते थे – 'सब सियालेर एक डाक'। वे कहते थे, जितने सियार होते हैं, वे एक ही स्वर में हुँआ-हुँआ ही बोलते हैं ! चाहे अमेरिका का सियार हो, चाहे भारत का सियार हो, चाहे जापान का सियार हो, सभी हुँआ-हुँआ ही बोलेंगे। इसी प्रकार जितने अवतार होते हैं, भले ही अलग देश में आये हों, अलग प्रान्त में आये हों, वे सभी एक ही सरल-सी बात कहते हैं, कैसे हम अपने स्वरूप को पहचानें? उसे ही कहते हैं अवतार ! अवतार और सामान्य जीव में अन्तर है। जीव कभी अवतार नहीं बन सकता, वह सच्चिदानन्द परमेश्वर ही नरदेह धारण करके अवतार लेकर आते हैं ! जीव अधिक से अधिक नित्यमुक्त हो सकता है। श्रीरामकृष्ण देव कहा करते थे, जीव चार प्रकार के होते हैं। एक होता है नित्यमुक्त, दूसरा होता है – मुक्त, तीसरा होता है – मुमुक्षु और चौथा होता है बद्ध ! श्रीरामकृष्ण जीवों की मछलियों से उपमा देते हैं। वे कहते हैं सरोवर में बहुत मछलियाँ हैं। मछुआरे ने मछली पकड़ने के लिए जाल फेंका। कुछ मछलियाँ ऐसी हैं, जो जाल में फँसती नहीं, ये नित्यमुक्त जीव की उपमा है, जो संसाररूपी सरोवर में पड़ा है, पर कभी जाल में फँसता नहीं, संसाररूपी जाल से मुक्त रहता है, यह नित्यमुक्त की उपमा है। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, कुछ मछलियाँ जाल में फँस गयी हैं, किन्तु वे जाल को काट कर निकल जाती हैं। मछुआरा कहता है – अरे ! इतनी बड़ी मछली निकल गयी। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, ये मुक्त जीव की उपमा है, जो संसाररूपी जाल में फँस गया था, पर अपनी साधना के द्वारा, भक्ति के द्वारा, संसार के जाल को काटकर, तोड़कर मुक्त हो जाता है। यह मुक्त जीव की उपमा है ! कुछ मछलियाँ ऐसी हैं, जो संसार जाल में फँसी हैं, पर मुक्त होने की चेष्टा करती हैं, कभी इधर जाती हैं, कभी उधर जाती हैं, संसार जाल से मुक्त होने की चेष्टा करती हैं, ये मुमुक्षु जीव की उपमा है, जो संसार जाल में फँसे हैं और मुक्त होने की चेष्टा करते हैं, इसके लिए तीर्थों में जायेंगे, मन्दिरों में जायेंगे, सत्संगों में जायेंगे कि कैसे संसार जाल से मुक्त हों, ये मुमुक्षु जीव की उपमा है। फिर श्रीरामकृष्ण कहते हैं, सैकड़ों ऐसी मछलियाँ हैं, जो संसारजाल में फँसी हैं, पर उससे निकलने का प्रयास ही नहीं करतीं, सोचती हैं, हम बड़े आनन्द में हैं और जाल में मुँह घुसा के पड़ी रहती हैं। वे यह नहीं जानतीं कि मछुआरा उन्हें ले जायेगा, काट डालेगा, मार डालेगा। श्रीरामकृष्ण कहते हैं, ये बद्धजीव की उपमा है, जो संसार जाल में फँसा है, इतना कष्ट पा रहा है, इतना दुख पाता है, फिर भी उससे निकलने का प्रयास नहीं करता। ऐसे चार प्रकार के जीव होते हैं।

किन्तु अवतार इससे अलग होते हैं। वह सच्चिदानन्द ब्रह्म

ही नरदेह धारण करके आते हैं। उनके पार्षद के रूप में कौन आते हैं? उनकी शक्ति ही पार्षद के रूप में उनके सहायक, सहयोगी बनकर के आती है। श्रीराम अवतार में हम देखते हैं, उनके तीनों भाई नित्यमुक्त हैं ! लक्ष्मणजी शेषनाग के अवतार हैं, भरत हैं, शत्रुघ्न हैं, ये सभी श्रीराम के सहयोगी बनकर के आते हैं। श्रीकृष्ण अवतार में हम क्या देखते हैं? भगवान के जो सहयोगी सखा हैं – दाम, सुदाम, उद्धव हैं, पितामह भीष्म हैं, ऐसे जो नित्यमुक्त सहयोगी हैं, ये भगवान कृष्ण के सहयोगी बनकर आते हैं। ऐसे ही भगवान बुद्ध के सहायक आते हैं।

इस युग में भगवान श्रीरामकृष्ण आते हैं और उनके साथ सोलह शिष्यगण भी आते हैं। जिनमें वे कुछ को ईश्वर कोटि कहा करते थे, ये नित्यमुक्त हैं। वे स्वामी विवेकानन्द के सम्बन्ध में कहा करते थे, यह शिव के अंश से आया है, सप्तर्षियों में से एक है। अर्थात् ये जितने नित्यमुक्त होते हैं, वे अवतार के सहयोगी के रूप में आते हैं।

सच्चिदानन्द ब्रह्म नर-देह धारण करके अवतार के रूप में आते हैं। संस्कृत में सीढ़ी को अवतरणिका कहते हैं। अवतार में हम दो प्रक्रिया देख पाते हैं। पहली प्रक्रिया, जिसमें वे भक्तों के द्वारा अवतरित किये जाते हैं। भक्त अपनी भक्ति के द्वारा, साधना के द्वारा, प्रेम के द्वारा भगवान को धराधाम में अवतरित करने के लिए बाध्य करते हैं। सीढ़ी से हम क्या करते हैं? नीचे का व्यक्ति सीढ़ी से चढ़कर ऊपर पहुँचता है ! भक्तों ने भगवान से कहा, प्रभु ! हम आप तक पहुँचना चाहते हैं। किन्तु हम तो नीचे हैं, आप तो बैकुण्ठ में विराजमान हैं, हम आप तक कैसे पहुँच सकते हैं? भगवान ने कहा, देखो, मैंने ये साधना की अवतरणिका, साधना की सीढ़ी लगा दी है, इस सीढ़ी से चढ़कर मेरे पास आ सकते हो। भक्तों ने कहा, प्रभु ! ये साधना तो ज्ञानी लोग करते हैं और ज्ञानियों की संख्या अधिक नहीं होती है। ये ज्ञानी साधना के माध्यम से, साधना की अवतरणिका से चढ़कर आपके पास पहुँच जाते हैं। पर हम भक्तों की संख्या हजारों में नहीं लाखों में है प्रभु ! हम कैसे आप तक पहुँचे? भगवान ने कहा, ज्ञानी जैसे साधना की अवतरणिका से मेरे पास पहुँचते हैं, बस तुम सब भी वैसे ही मुझ तक पहुँचने का प्रयास करो। भक्तों में गोस्वामी तुलसीदास जी भी थे। तुलसीदासजी ने कहा, अच्छा प्रभु ! मेरे एक प्रश्न का उत्तर दीजिए। जैसे साधना की अवतरणिका से नीचे का व्यक्ति ऊपर पहुँचता है, वैसे ऊपर का व्यक्ति क्या इस अवतरणिका से नीचे आ सकता है? भगवान ने कहा, इसमें क्या आश्चर्य की बात है? जिस अवतरणिका से नीचे का व्यक्ति ऊपर पहुँच सकता है, ऊपर का व्यक्ति वैसे ही उतरकर नीचे आ सकता है ! गोस्वामीजी ने कहा – देखिए प्रभु ! हम नीचे लाख-लाख लोग हैं, जो आपको प्राप्त करना चाहते हैं। हम एक-एक करके साधना की अवतरणिका से आप तक पहुँचने का प्रयास करें, अब बताइये इसमें कितने वर्ष लग जायेंगे? पता नहीं कितने जन्म बीत जायें ! यदि एक-एक कर हम लाख-लाख लोग चढ़ेंगे, बहुत समय लग जायेगा। लेकिन आप ऊपर में अकेले विद्यमान हैं, आप ही कृपा करके साधना की अवतरणिका से नीचे उतर आइये, हम सब आपको प्राप्त कर लेंगे। तो इस प्रकार भक्त भगवान से कहता है, आप ही नीचे उतर आइये, हम कहाँ ऊपर चढ़ें? भक्तों के प्रेम के द्वारा, भक्तों की साधना के द्वारा, भक्तों की इच्छा के द्वारा, भक्त भगवान को नीचे उतारता है। इसे कहते हैं, अवतार ! यह अवतार की पहली प्रक्रिया है, जिसमें भक्त के प्रेम के वशीभूत होकर भगवान धराधाम में अवतरित होते हैं।

अवतार की दूसरी प्रक्रिया है – लोगों के कष्टों को दूर करने के लिए, लोगों पर कृपा करने के लिए भगवान अपनी इच्छा से इस धराधाम में आते हैं, प्रभु अपनी इच्छा से अवतरित होते हैं। जैसे भगवान श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं –

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।

श्रीभगवान कहते हैं – अर्जुन ! जब–जब भी धर्म का ह्रास होता है, अधर्म की वृद्धि होती है, तब-तब मैं अवतरित होता हूँ। किसलिए आते हैं भगवान? कहते हैं, परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् – मैं सज्जनों का संरक्षण करने और दुष्टों का नाश करने के लिए आता हूँ। साथ ही साथ धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे–युगे – धर्म की स्थापना के लिए मैं युग–युग में आता हूँ। भगवान अपनी इच्छा से लोगों पर कृपा करने के लिए अवतरित होते हैं।

श्रीरामकृष्ण देव का अवतार इस दूसरी प्रक्रिया से होता है। अपनी इच्छा से श्रीरामकृष्ण देव इस धराधाम में आते हैं। भगवान राम का अवतरण पहली प्रक्रिया से होता है। भक्त भगवान राम को अवतरित करते हैं। किसने अवतरित

किया भगवान राम को? एक हैं महाराज मनु, जिनको मानव जाति का आदि जनक कहा जाता है, मनु के नाम से हमारी ये मानव जाति चली आ रही है। गोस्वामीजी लिखते हैं –

स्वयंभू मनु अरु सतरूपा।
जिन्ह तें भै नरसृष्टि अनूपा।।
दंपति धरम आचरण नीका।
अजहुँ गाव श्रुति जिन्ह कै लीका।। १/१४१/२

कहते हैं कि स्वयंभू मनु को किसी ने उत्पन्न नहीं किया है। वे स्वयंभू हैं, स्वयं उत्पन्न हुए हैं और उनकी पत्नी हैं शतरूपाजी। इस मनु और शतरूपा से सारी सृष्टि उत्पन्न हुई है। हम सब मनु की सन्तान हैं, इसीलिए मानव कहलाते हैं। बड़े ही धार्मिक दम्पती थे। आज भी श्रुतियाँ उनका गायन करती हैं। महाराज मनु, हजार वर्षों तक राज करते हैं –

तेहिं मनु राज कीन्ह बहु काला।
प्रभु आयसु सब बिधि प्रतिपाला।। १/१४१/८

मनु, श्रुतियों के अनुरूप, वेदों के अनुरूप राज्य का संचालन करते हैं, पर बाद में महाराज मनु को अनुभव होता है कि इतने वर्ष बीत गये मुझे राज्य करते हुए पर अभी भी मेरा मन विषयों में ही लगा हुआ है, अभी भी विषयों से निवृत्ति नहीं हुई, मन सांसारिक भोगों में ही लगा हुआ है, ऐसा वे एकान्त में विचार कर रहे हैं –

होइ न विषय बिराग भवन बसत भा चौथपन।
हृदयँ बहुत दुख लाग जनम गयउ हरिभगति बिनु।।
१/१४२/०

इतने वर्षों से राज्य कर रहा हूँ, फिर भी मेरा मन विषयों में लगा हुआ है। बिना भगवान का भजन किये मेरा जीवन ऐसे ही बीता जा रहा है। बड़ा दु:ख होता है महाराज को ! वे विचार करते हैं, भगवान को प्राप्त करना ही होगा। जहाँ ये विचार मन में आया, दूसरे दिन पुत्र को राज्य सौंप देते हैं और अपनी पत्नी शतरूपा को लेकर निकल पड़े भगवान को प्राप्त करने के लिए। मनु और शतरूपा वन-प्रान्तर से चले जा रहे हैं ! गोस्वामीजी लिखते हैं –

पंथ जात सोहहिं मतिधीरा।
ग्यान भगति जनु धरें सरीरा।। १/१४२/२

मानों ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे ज्ञान-भक्ति देह धारण करके भगवान को प्राप्त करने जा रहे हैं। महाराज मनु हैं मानों ज्ञान के प्रतीक, शतरूपाजी हैं भक्ति की प्रतीक। ये ज्ञान-भक्ति मानों देह धारण करके भगवान को प्राप्त करने चले जा रहे हैं। दोनों नैमिषारण्य क्षेत्र में पहुँचते हैं, गोमती के निर्मल जल में स्नान करते हैं और फिर उनकी कठिन साधना प्रारम्भ होती है। कहते हैं –

पहुँचे जाइ धेनुमति तीरा।
हरषि नहाने निरमल नीरा।। १/१४२/३

गोमती के जल में स्नान कर कठोर साधना प्रारम्भ की। दो चार वर्ष नहीं, कहते हैं २६ हजार वर्ष तपस्या करते हैं महाराज मनु ! उनकी साधना से प्रसन्न होकर ब्रह्मा, विष्णु और महेश आते हैं। एक बार नहीं अनेक बार आते हैं। ब्रह्मा, विष्णु और महेश कहते हैं –

बिधि हरि हर तप देखि अपारा।
मनु समीप आए बहु बारा।। १/१४४/२

देखकर के ब्रह्मा, विष्णु महेश एक बार नहीं अनेक बार आते हैं और आकर के क्या कहते हैं? –

मागहु बर बहु भाँति लोभाए।
परम धीर नहिं चलहिं चलाए।। १/१४४/३

हे राजा ! वर माँगो, वर माँगो, बोलो क्या चाहिए? महाराज मनु कहते हैं – नहीं प्रभु ! मुझे आपसे वरदान नहीं चाहिए। हमने तो आपको बुलाया नहीं ! हम जिनके लिए तपस्या कर रहे हैं, वे जब आयेंगे, तो उनसे वरदान लेंगे, आपसे वरदान नहीं लेंगे। यही भक्त की निष्ठा है ! भक्त अपने भगवान को देखना चाहता है। भक्त दूसरे के इष्ट से प्रसन्न नहीं होता, वह तो अपने भगवान को, अपने इष्ट को देखना चाहता है।

प्रसंग आता है न ! एक बार गोस्वामीजी वृन्दावन में बाँकेबिहारी जी के मन्दिर में गये ! भगवान श्रीकृष्ण को बहुत सुंदर सजाया गया था। देखते ही गोस्वामीजी कहते हैं –

कहा कहौ छवि आपकी, भले विराजो नाथ !
तुलसी मस्तक तब नवै, धनुष बाण लो हाथ।।

वाह प्रभु ! आप कितने सुन्दर दिखाई दे रहे हो, पर मैं अभी आपको प्रणाम नहीं करूँगा। जब हाथ में धनुष-बाण धारण करोगे, अर्थात् जब रामरूप धारण करोगे, तभी मैं प्रणाम करूँगा, कृष्ण रूप में प्रणाम नहीं करूँगा। ये भक्त की निष्ठा है ! भक्त अपने प्रभु, अपने इष्ट को देखना चाहता है। कहा जाता है कि भगवान् ने तुरन्त रामरूप धारण कर लिया, तब तुलसीदासजी प्रणाम करते हैं। **(क्रमश:)**

नेतृत्व में सशक्त महिलाएँ

स्वामी गुणदानन्द, रामकृष्ण मठ, नागपुर

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार, सभी राष्ट्र स्त्रियों की पूजा करके महान बने हैं। मनुस्मृति के अनुसार, जहाँ स्त्रियों का सम्मान नहीं होता, जहाँ वे दु:खी रहती हैं..., उस देश की उन्नति की आशा कभी नहीं की जा सकती।

इसलिए पहले स्त्रियों का उत्थान करना होगा। यह केवल स्वामी विवेकानन्द का एक स्वप्न नहीं था, बल्कि एक जीवन्त दृष्टिकोण था। उन्होंने कहा था, यदि पुराकाल पुरुष शक्ति का था, तो भविष्य स्त्रियों की क्षमता, ज्ञान-मीमांसा का होगा।

आधुनिक काल में – अध्यात्म, राजनीति, विज्ञान, प्रशासन, सेना, खेल जगत् प्रत्येक क्षेत्र में नारी-शक्ति का अभ्युदय हुआ है।

यदि मानवता को सशक्त बनाना हो, तो महिलाओं को सशक्त बनना होगा। महिलाएँ अपने पारिवारिक दायित्वों और कर्तव्यों के निर्वहन से परे, बलिदान और प्रतिबद्धता का परिचय देकर सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनीतिक, और खेल जगत में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहण कर रही हैं।

पैरा-तीरंदाज शीतल देवी

विश्व की बिना हाथ वाली एकमात्र भारतीय महिला तीरंदाज शीतल देवी जम्मू-कश्मीर के लोही धार गाँव की निवासी है। शीतल के पिता किसान हैं। शीतल के जन्म से ही हाथ नहीं हैं। वह जन्म से ही फोकोमेलिया नाम की बीमारी से ग्रस्त है। इस बीमारी में अंग विकसित नहीं हो पाता है। शीतल देवी ठीक से धनुष नहीं उठा पाती थी।

शीतल देवी

पिल्सेन में माता वैष्णो देवी श्राइन बोर्ड तीरंदाजी अकादमी कोच अभिलाषा के लिए शीतल को तीरंदाजी आरम्भ कराना चुनौतीपूर्ण कार्य था। शीतल को तीरंदाजी सिखाना आसान नहीं था। उसे कैसे तीर चलाना है, यह बताना मुश्किल था। इसके लिए सेना के अधिकारी ने कटरा स्थित माता वैष्णो देवी श्राइन बोर्ड तीरंदाजी अकादमी के कोच कुलदीप वेदवान को शीतल के बारे में अवगत कराया। कोच कुलदीप ने विश्व के पहले बिना हाथों के तीरंदाज अमेरिका के मैट स्टुट्जमैन के वीडियो शीतल को दिखाना आरम्भ किया। इससे काफी सहायता मिली। मैट शीतल से मिले और शीतल का धनुष भी देखकर उन्होंने इसमें कुछ परिवर्तन करने की सलाह दी। शीतल ने अकादमी में दूसरे पैरा तीरंदाजों को तीरंदाजी करते देखा, तो वह यह खेल अपनाने को तैयार हो गई। कोच ने शीतल को अकादमी में आने और अन्य लोगों की शूटिंग देखने के लिए प्रोत्साहित किया। शीतल ने विकलांगताओं वाले कई पैरा तीरंदाजों को देखा। उसे जल्द ही खेल में रुचि पैदा हो गई। उसके लिए विशेष धनुष तैयार किया गया, जिसे हाथ से नहीं, बल्कि पैर और छाती से चलाया जाता है। छह माह के अंदर शीतल ने इसमें दक्षता प्राप्त कर ली। वह पैरा के अलावा आम तीरंदाजों के साथ भी खेलने लगी। शीतल ने जम्मू की माता वैष्णो देवी तीरंदाजी अकादमी से प्रशिक्षण लिया और कुछ महीने उसने लगातार अभ्यास किया और इसके बाद वे तेजी से आगे बढ़ी और राष्ट्रीय चैंपियनशिप में भाग लिया।

पैरा तीरंदाजी चैंपियनशिप २०२३ में भारत की १६ वर्षीय एथलीट शीतल महिला वर्ग के कम्पाण्ड इवेंट के वर्ल्ड पैरा आर्चरी चैंपियनशिप के फाइनल में पहुँची। चेक रिपब्लिक के पिल्सेन में हुई चैंपियनशिप में शीतल देवी ने सेमीफाइनल में भारत की ही सरिता को पराजित किया। पिल्सेन (चेक गणराज्य) में खेली गई विश्व पैरा तीरंदाजी के फाइनल में पहुँचने वाली वह विश्व की पहली बिना हाथों की महिला तीरंदाज बन गई। इससे पहले शीतल देवी ने चेक गणराज्य में आयोजित यूरोपीय

पैरा तीरंदाजी कप में सिल्वर मेडल जीता था। शीतल ने चीन के हांगझोउ शहर में आयोजित २०२३ एशियन पैरा गेम्स में दो गोल्ड जीत कर इतिहास में अपना नाम अमर कर लिया। शीतल को सर्वश्रेष्ठ युवा एथलिट के रूम में भी चुना गया है।

कम समय में शीतल ने उस स्तर पर अपनी छाप छोड़ी है, जिसके बारे में कुछ लोग केवल सपना देख सकते हैं। उसने कभी दिव्यांगता के कारण स्वयं को कमजोर नहीं समझा। १६ साल की शीतल देवी के लिए दिव्यांगता अभिशाप नहीं बनी, बल्कि उसने दिव्यांगता को एक सशक्त नेतृत्व में रूपान्तरित कर दिया। शीतल 'आर्मलेस आर्चर' के नाम से भी प्रसिद्ध है।

नेक्स्ट जेनरेशन लीडर

महिला एकल (एसएल३ श्रेणी) में विश्व की दूसरी वरीयता प्राप्त रह चुकी भारतीय पैरा-बैडमिन्टन खिलाड़ी मानसी जोशी का जन्म ११ जून, १९८९ को राजकोट में हुआ और उसने अपनी शिक्षा एटॉमिक एनर्जी सेंट्रल स्कूल से और इलेक्ट्रॉनिक्स में स्नातक डिग्री के.जे. सोमाया कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग मुंबई के अणुशक्तिनगर से की। मानसी बैडमिन्टन में रुचि रखती थी और उसने विद्यालय और महाविद्यालय स्तर पर मैचों में भाग लिया। उसकी प्रतिभा में खूब निखार आया। उसके पिता भाभा एटॉमिक सेंटर में कार्यरत थे। सेवानिवृत्त होने के बाद पिता ने ही उनको छह साल की उम्र में ही बैडमिन्टन के खेल से परिचित करवाया। दिसम्बर, २०११ में, २२ साल की आयु में एक सड़क दुर्घटना हुई। छह ऑपरेशन्स के बाद ४५ दिन तक वह अस्पताल में रही, परन्तु उसका एक पैर क्षतिग्रस्त हो चुका था।

सड़क-दुर्घटना के बाद मानसी अपने स्वास्थ्य में सुधार लाने का प्रयास करती रही। उसके लिए वह योग, मेडिटेशन की सहायता लेती थी और बैडमिन्टन खेलने का प्रयास भी करने लगी। इस प्रयास से मानसी एशियन पैरा गेम्स-२०१४ के सिलेक्शन ट्रायल्स तक पँहुच गयी।

मानसी ने समाज में विकलांगता की समझ बेहतर करने के लिए, पुरानी सोच बदलकर विकलांगों के अधिकारों के लिए कार्य करना प्रारम्भ किया। उसके इस सराहनीय कार्य के लिए अक्तूबर, २०२० में टाइम मैगज़ीन ने मानसी को **'नेक्स्ट जेनरेशन लीडर २०२०'** की सूची में डाला था और एशिया कवर पर उनकी तस्वीर भी छापी थी। मानसी यह सम्मान प्राप्त करने वाली भारत की पहली एथलिट और विश्व की पहली पैरा-एथलिट बनी।

मानसी जोशी

'इंटरनेशनल डे ऑफ द गर्ल चाइल्ड' के दिन ११, अक्तूबर, २०२० को मानसी के सम्मान में और लड़कियों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से बार्बी कंपनी ने उसके जैसी दिखने वाली 'One of a Kind' बार्बी डॉल बनाई। वर्ष २०२० में बीबीसी ने मानसी जोशी को विश्व की १०० सबसे प्रभावशाली और शक्तिशाली महिलाओं की सूची में सम्मिलित किया। वह बीबीसी इंडियन स्पोर्ट्सवुमेन ऑफ द ईयर अवॉर्ड के लिए पी.वी. सिंधू, मेरी कॉम, विनेश फोगाट और द्युति चंद के साथ नामांकित भी हुई थी।

सशक्त होती देश की बेटियाँ

जनवरी, २०२३ में सेना ने पहली बार सियाचिन ग्लेशियर पर एक महिला अधिकारी कैप्टन शिवा चौहान को तैनात किया है। भारतीय वायु सेना ने वर्तमान में मिग-२१, Su-30MKI और राफेल जैसे फाइटर विमानों के लिए महिला फाइटर पायलटों को शामिल किया। पहले बैच में तीन महिला फाइटर पायलट शामिल हुईं।

भारत में महिलाएँ विभिन्न सेना इकाइयों में सेवाकार्य कर रही हैं। सशस्त्र बलों में १०,४९३ महिला अधिकारी कार्यरत हैं। चिकित्सा, इंजीनियरिंग, सिग्नल, आर्मी एयर डिफेंस, इंटेलिजेंस कॉर्प्स, आर्मी सर्विस कॉर्प्स, आर्मी ऑर्डनेंस कॉर्प्स और इलेक्ट्रॉनिक्स एंड मैकेनिकल इंजीनियरिंग इत्यादि क्षेत्रों में सेवाएँ दे रही हैं।

अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस समारोह के हिस्से के रूप में, राष्ट्रीय वाहक एयर इंडिया में दिल्ली से सैन फ्रांसिस्को तक की विश्व की सबसे लंबी नॉन-स्टॉप उड़ान, (लगभग १७ घंटों में १४,५०० किलोमीटर) का संचालन महिलाओं द्वारा संभाला गया, इससे महिलाओं की उत्कृष्ट योग्यता का परिचय मिलता है।

महान देशभक्ति, वीरता, नि:स्वार्थता और शान्ति के लिए संघर्ष में महिलाओं का देश के प्रति सदैव महान योगदान रहा है। ○○○

सबकी श्रीमाँ सारदा

स्वामी चेतनानन्द, अमेरिका

(स्वामी चेतनानन्द जी महाराज वेदान्त सोसाइटी, सेंट लुइस के मिनिस्टर-इन-चार्ज हैं। विवेक ज्योति के पाठकों के लिये उनके अँगेजी निबन्ध का हिन्दी अनुवाद भोपाल के लक्ष्मीनारायण इन्दुरिया ने किया है।)

(गतांक से आगे)

स्वामी ईशानानन्द ने अपने संस्मरण में उल्लेख किया है कि श्रीमाँ की गायों की देखरेख के लिए एक अन्य लड़का था। रमेन्द्र की आयु १४ वर्ष की थी। सुरेन्द्रनाथ इस लड़के का वेतन देते तथा गायों का पूरा खर्च वहन करते थे। अगस्त में एक दिन प्रात: रमेन्द्र पुण्यपुकुर के उत्तर-पूर्व कोने में जब घास काट रहा था, उस समय पनिया साँप ने उसके बाएँ हाथ की उंगली को काट लिया। वह दौड़कर माँ सारदा के घर गया, वहाँ डॉ. रामपद ने काटी हुई जगह चीर दी, जिससे विष खून के साथ बाहर निकल आयेगा। रमेन्द्र की कलाई को दो-तीन जगह जोरों से रस्सी से बाँध दिया गया, जिससे विष को शरीर में फैलने से रोका जा सके।

जिस समय यह घटना घटी, माँ सारदा उस समय पूजा कर रही थीं। जब उन्होंने शोरगुल सुना, वे पूजा घर से उठकर आईं और देखने गईं कि क्या हो गया। उन्होंने डॉ. रामपद से रस्सियाँ खोलने के लिए कहा और बोलीं – ''इसे तत्काल माँ सिंहवाहिनी के मंदिर ले चलो। अन्य कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। माँ सिंहवाहिनी की कृपा से रमेन्द्र ठीक हो जायेगा।'' दो व्यक्ति सहायता करके रमेन्द्र को मन्दिर ले गए, जो जयरामबाटी ग्राम के दक्षिण-पूर्व कोने पर स्थित था। माँ उनके पीछे-पीछे गईं।

माँ सारदा के निर्देशानुसार, रमेन्द्र ने देवी को साष्टांग प्रणाम किया और फिर उत्तर की ओर सिर रखकर नीचे पीठ के बल सो गया। माँ ने थोड़ी मिट्टी और देवी को अर्पित एक फूल उसके मुख में डाल दिया और थोड़ी-सी मिट्टी उसके घाव में लगा दिया। माँ ने अपने सेवक से सिंहवाहिनी की मिट्टी को थोड़ी मात्रा में पानी मिलाकर लेप बनाने को कहा और उसे रमेन्द्र के पूरे शरीर में लगवा दिया।

शीघ्र ही रमेन्द्र के शरीर का बायाँ हिस्सा फूलने लगा। माँ सारदा अपने सेवक के साथ दोपहर २ बजे तक वहाँ बैठी थीं। जब देवी की पूजा समाप्त हो गई, माँ ने थोड़ा मठा और पूजा का पवित्र जल लेकर रमेन्द्र को पिला दिया। माँ भोजन के लिए घर गईं और तीन बजे मंदिर लौट आईं। उस सन्ध्या को रमेन्द्र का शरीर इतना फूल गया कि लगता था, उसकी चमड़ी फट जाएगी। उसकी आँखें बन्द थीं और वह बोल नहीं पा रहा था। उसके शरीर की मिट्टी सूख गई थी, इसलिये उसके उपर मिट्टी का दूसरा लेप लगाया गया। रमेन्द्र की विधवा माँ को नकुन्दा गाँव में सूचना भेजी गई, जो उस रात वहाँ आई और अपने बेटे के लिए रोने लगी।

श्रीमाँ ने यह कहकर उसे सान्त्वना दी : ''चिन्ता मत करो। जाग्रत देवी सिंहवाहिनी की कृपा से तुम्हारा पुत्र ठीक हो जायेगा। अपने बेटे के पास मत रोओ।'' माँ सारदा ११ बजे घर वापस आ गयीं।

दूसरे दिन बड़े सबेरे माँ मंदिर गईं और देखीं कि रमेन्द्र ने आँखें खोली हैं, उसके शरीर का सूजन कुछ कम हुआ है और उसके घाव से कुछ तरल पदार्थ निकला है। माँ सारदा ने अपने सेवक से रमेन्द्र के शरीर में मिट्टी का लेप और लगाने का निर्देश दिया, लेकिन जब वह ऐसा कर रहा था, उस समय घाव के पास का कुछ माँस निकल गया। जब माँ सारदा ने उसे देखा, तब बोलीं – ''ठीक है, अब खतरा टल गया। माँ सिंहवाहिनी की कृपा से अब डरने की कोई बात नहीं है। माँ ने उसके जीवन की रक्षा कर दी। डॉक्टर की शल्य-क्रिया के फलस्वरूप विषैला भाग अलग हो गया और उसका जीवन बच गया।''

रमेन्द्र दोपहर तक थोड़ा ठीक हुआ और बातें करने लगा। माँ ने उसे मठा और पूजा का पवित्र जल फिर पिलाया और उसे वहीं लिटाए रखा। दूसरे दिन रमेन्द्र ने देवी की पूजा की, दोपहर भोजन के लिए माँ के घर आया। वह शीघ्र ही स्वस्थ हो गया और अपनी माँ के साथ घर चला गया।

बाद में माँ की गृहस्थी में दूध की समस्या को हल करने के लिए चार गायें खरीदी गईं और दीनू नाम के एक लड़के को उनकी देख-भाल के लिए नियुक्त किया गया। पड़ोस में रहनेवाले गोपाल मंडल बताते थे।

''चाची (माँ सारदा) के पास चार गायें थीं – महंता, महाराज, लक्ष्मीकान्त और इन्द्रराज। घर के काम-काज के बीच चाची गायों को भात का पानी (माड़) देती थीं और उनके मस्तक, गले के नीचे के भाग और पीठ को सहलाती थीं। कभी-कभी वे उनके सींगों में तेल लगाती थीं। दीनू गायों को चराने ले जाता था। चाची उसको बहुत पसंद करती थीं। प्रात: नाश्ता करने के बाद दीनू गायों को खेत पर ले जाता और दोपहर एक बजे लौटता था। चाची दीनू को भोजन कराने के बाद भोजन करती थीं।'

सुरेन्द्रनाथ सरकार ने भी प्रत्यक्षदर्शी वृत्तान्त लिखा है – ''जयरामबाटी में एक दिन बड़े सबेरे माँ के घर के बाहरी आंगन में एक बछड़ा करुणाजनक स्वर में चिल्ला रहा था। गाय का दूध निकालने के उद्देश्य से रात में बछड़े को उसकी माँ से अलग रखा गया था। उसकी आवाज सुनकर श्रीमाँ दौड़कर यह कहते हुए बाहर आई – ''मैं आ रही हूँ, मेरे बच्चे ! मैं आ रही हूँ। मैं तुमको अभी छोड़ दूँगी।'' माँ ने तत्काल रस्सी के बन्धन से उसे मुक्त कर दिया। स्तम्भित होकर मैंने जगज्जननी की समस्त प्राणियों के प्रति करुणा को देखा।''

माँ सारदा के घर में गंगाराम नामक एक पालतू तोता था। माँ प्रतिदिन उसे नहलाती थीं, उसका पिंजड़ा साफ करती थीं और भोजन और जल देती थीं। प्रत्येक सुबह और शाम माँ पक्षी से बोलतीं – ''गंगाराम तुम अब अपना मन्त्र-जप करो।'' तोता बोलता था, हरे कृष्ण, हरे रामा, कृष्णा कृष्णा, रामा रामा।'' माँ ने उसे भगवान का नाम लेना सिखाया था। उसने माँ से ब्रह्मचारियों का नाम सीख लिया था। कभी-कभी वह ''माँ, ओ माँ'' पुकारता था और माँ उत्तर देती थी, ''आ रही हूँ, मेरे बच्चे आ रही हूँ।'' माँ कुछ चना और पानी लेकर आती थीं, जैसे वे जानती थीं कि पक्षी का पुकारने का अर्थ वह भूखा है।

राधू के पास एक पालतू बिल्ली थी, माँ ने उसके लिए प्रतिदिन दूध की व्यवस्था कर दी थी। वह बिना भय के चुपचाप, माँ के पैरों के पास लेट जाती थी। जब वह कुछ शरारत करती, माँ सारदा छड़ी से उसे दंडित करने का स्वांग करतीं, लेकिन इससे बिल्ली सरककर और माँ के चरणों के निकट आ जाती थी। हँसते हुए माँ छड़ी को फेंक देती थीं और सब माँ के विनोदपूर्ण भाव को देखकर हँसते थे। बिल्लियों की भोजन चोरी करने की प्रवृत्ति होती है, लेकिन इससे माँ को कोई परेशानी नहीं होती थी। उन्होंने टिप्पणी की – ''भोजन चोरी करना उनका धर्म है। उनको हमेशा प्रेम से खिलानेवाला कौन है?'' एक दिन भोजन के लिए दो बिल्लियाँ लड़ीं और उनमें से एक के पैर में मोच आ गया। चिन्तित होकर माँ बोलीं, ''इस बिल्ली का एक पैर चोटिल हो गया है, अब यह अपने भोजन का शिकार कैसे करेगी? डॉ. नलिन को बुलाओ। डाक्टर आए और लकड़ी का एक छोटा टुकड़ा और कपड़े से बिल्ली के पैर में पट्टी बाँध दिए। कुछ दिनों में बिल्ली स्वस्थ हो गई।

एक बार ब्रह्मचारी ज्ञान राधू की बिल्ली से रुष्ट हो गए। उन्होंने बिल्ली के साथ कठोरतापूर्वक व्यवहार करते हुए उसे जमीन पर फेंक दिया। माँ का चेहरा दर्द से पीला पड़ गया। ज्ञान के दुर्व्यवहार के बावजूद भी बिल्ली को माँ और राधू के पास एक सुरक्षित स्थान मिल गया और फलत: बिल्ली ने कुछ बच्चों को जन्म दिया। जब माँ सारदा का कलकत्ता जाने का समय आ गया, उन्होंने ज्ञान से कहा – ''बेटा, इन बिल्लियों के लिए अतिरिक्त चावल पकाना, जिससे वे भोजन के लिए पड़ोसियों के घर नहीं जाएँगी। अन्यथा पड़ोसी हमें भला-बुरा कहेंगे।'' माँ जानती थीं कि इस सामान्य परामर्श से काम नहीं बनेगा, अत: उन्होंने आगे कहा – ''देखो ज्ञान, इन बिल्लियों को मारना मत। यह निश्चित रूप से समझ लेना, मैं इनके भीतर निवास करती हूँ।'' इतना पर्याप्त था, ज्ञान अब इन पर कभी हाथ या डंडा नही उठा सकेगा। यद्यपि ज्ञान शाकाहारी थे, तथापि वे प्रतिदिन छोटी मछलियाँ खरीदकर लाते थे, उसे तलकर चावल में मिलाकर उसे बिल्लियों को खिलाते थे।

उद्‌बोधन भवन में ब्रह्मचारी गनेन्द्रनाथ के बिस्तर पर एक

बिल्ली ने बच्चों को जन्म दिया। माँ सारदा और गोलाप-माँ ने गनेन के बिस्तर को शीघ्रता से साफ किया और चादर को बदल दिया। माँ सारदा शंकित थीं कि गनेन बिल्ली को कहीं घर से बाहर न कर दे। अत: माँ ने स्नेहपूर्वक उससे कहा : ''देखो बेटा, बिल्ली यहाँ रहती है, यहीं भोजन करती है। अब वह प्रसव के लिए कहाँ जा सकती थी? बेटा उस बिल्ली को मारना मत।''

प्रव्राजिका भारतीप्राणा की स्मृतियाँ

उद्‌बोधन भवन में राधू के पास दो बिल्लियाँ थीं – रंगा और रमनी। वे अच्छे स्वभाव की थीं और दूसरे की थाली से भोजन लेने का प्रयास कभी नहीं करती थीं। जब राधू या गोलाप-माँ खिलातीं, तभी वे खाती थीं माँ भी उन्हें पसंद करती थीं। एक दिन रंगा ने बिस्तर गंदा कर दिया, इसलिए रासबिहारी ने उसे दूर किसी स्थान पर ले जाकर छोड़ दिया। माँ दुखी हो गईं : ''हे भगवान! यह क्या है? आज सुबह रासबिहारी ने क्या कर दिया? वह साधु है, उसके अंदर कोई माया नहीं होना चाहिए।'' राधू और गोलाप-माँ को उस बिल्ली के लिए बहुत दुख हुआ। जैसे भी हो, वह बिल्ली चार महीने बाद उद्‌बोधन भवन लौट आई। वह दुर्बल हो गई थी और कुछ दिनों बाद सड़क में उसकी मृत्यु हो गई। गोलाप-माँ ने गंगा में उसे विसर्जित कर दिया और उसके लिए अनुष्ठान करने के लिए माँ से अनुमति ले ली। माँ ने कहा – देखो, वह बिल्ली एक भक्त थी, जो शापग्रस्त थी।'' गोलाप माँ ने कुछ पैसे इकट्ठे किए और उसकी मृत्यु के १३वें दिन एक उत्सव आयोजित किया। बेलूड़ मठ से कुछ साधु आए और काली कीर्तन हुआ और सभी लोगों ने भोज का आनन्द लिया। उन लोगों ने कहा : ''बिल्ली निश्चित ही भाग्यशाली है, इसलिये माँ के घर में उसकी स्मृति का आयोजन हुआ।''

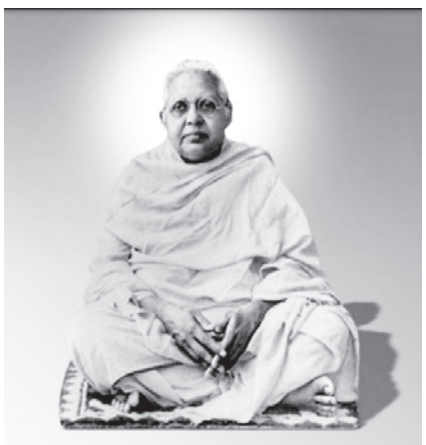

प्रव्राजिका भारतीप्राणा

एक बार जयरामबाटी में राधू की बिल्ली, आंगन में लेटी हुई थी। एक स्त्री उसे अपने पैरों से सहला रही थी और उसने अपने पैर से बिल्ली के सिर को छूआ। यह देख कर माँ सारदा बोलीं – ''हे भगवान ! तुम क्या कर रही हो? सिर गुरु का स्थान है, क्या किसी को अपना पैर वहाँ रखना चाहिए? बिल्ली को प्रणाम करो।'' महिला ने उत्तर दिया – ''माँ, मैं यह बिलकुल नहीं जानती थी। मैंने आपसे अभी यह सीखा है।''

माँ की सेविका बसनबाला बताती थीं – ''जयरामबाटी में एक दिन माँ भोजन करने बैठी थीं, पर उन्होंने भोजन करना प्रारम्भ नहीं किया था। मैंने भी अपना भोजन थाली में निकाल लिया था। अचानक एक बिल्ली मेरी थाली का भोजन खाने लगी। माँ ने कुछ नहीं कहा और न बिल्ली को दण्डित किया। माँ सामान्य ढंग से बोलीं – 'बसन मेरा आधा भोजन तुम ले लो।' फिर उन्होंने मुझे अपना आधा भोजन दे दिया और हमलोगों ने साथ भोजन किया।''

जयरामबाटी २८ मार्च, १९१३ का दिन था। स्वामी अरूपानन्द अपने संस्मरण में लिखते हैं –

पगली मामी (राधू की माँ) आंगन में पत्तल और पानी का गिलास रखकर अपने सम्बन्धी के लिए खाना परोसने की तैयारी कर रही थीं। राधू की बिल्ली ने गिलास का पानी जूठा कर दिया। इसलिए उन्होंने पानी का दूसरा गिलास रख दिया। बिल्ली ने इस गिलास के पानी को भी पीकर जूठा कर दिया। पगली मामी ने बिल्ली को 'मैं तुझे मार डालूँगी' कहकर चिल्लाते हुए उसके पीछे दौड़ी। माँ पास में ही थीं। माँ ने कहा – ''किसी भी प्यासे जानवर को पानी पीते हुए नहीं रोकना चाहिए।'' पगली मामी तत्काल यह कहते हुए भड़क उठीं – ''आपको बिल्ली के प्रति अपनी असीम करुणा प्रदर्शित करने की आवश्यकता नहीं है। आप ने लोगों पर बहुत कृपा कर दी है।'' आप मनुष्यों के लिए अपनी कृपा को बचाकर क्यों नहीं रखतीं?'' माँ गम्भीर होकर बोलीं : ''वह व्यक्ति सचमुच अभागा है, जो मेरी कृपा से वंचित है। मैं ऐसे किसी को नहीं जानती, यहाँ तक कि कीड़ा, जो मेरी कृपा को प्राप्त करनेवाला नहीं है।''

छोटे हाथी में बैठकर एक नागा साधु एक बार जयरामबाटी में आए। माँ ने कुछ चावल हाथी को खिलाया। फिर उन्होंने हाथी के मस्तक पर सिंदूर का टीका लगाया। उन्होंने भोजन के लिए साधु को कुछ पैसे भी दिए।

मैं सज्जन और दुर्जन सबकी माँ हूँ

संसार में सज्जन को सज्जन बनाने में कोई प्रतिष्ठा नहीं है, लेकिन दुर्जन को सज्जन बनाना, नि:संदेह प्रशंसनीय है। दुर्बल व्यक्ति या एक अपराधी को उसकी दुर्बलता या उसके अपराधों का स्मरण कराकर कोई उनकी सहायता नहीं कर सकता। इस संसार में कोई भी पूर्णत: अच्छा अथवा पूर्णत: बुरा नहीं है। श्रीमाँ अपने बच्चों की अच्छाई और बुराई से परिचित थीं। माँ कहती थीं, ''लोग बहुधा अपने स्वभाववश बुरा काम करते हैं। उन्हें कैसे अच्छा बनाना है, बहुत कम लोग जानते हैं।''

सम्भवत: वर्ष १९०१ में माँ सारदा, १०/२ बोसपारा लेन, बागबाजार में एक किराए के मकान में रहती थीं। स्वामीजी ने एक उड़िया नौकर को चोरी करने के कारण बेलूड़ मठ से निकाल दिया। वह गरीब था और उसका परिवार उसकी कमाई पर आश्रित था। वह असहाय व्यक्ति माँ के पास गया, उसने अपना अपराध स्वीकार किया और माँ से क्षमा याचना की। माँ ने शरण दी और भोजन कराया। दोपहर में जब स्वामी प्रेमानन्द माँ को प्रणाम करने आए, माँ ने उनसे कहा – ''देखो बाबूराम, यह आदमी बहुत गरीब है। गरीबी के वशीभूत होकर उसने अपराध किया है। इसलिये नरेन्द्र ने उसे सजा दी है और नौकरी से निकाल दिया है। देखो यह संसार दुखमय है। तुम संन्यासी हो, इसलिये तुम इसे बहुत कम समझते हो। इसे वापस बेलूड़ मठ ले जाओ।'' स्वामी प्रेमानन्द ने माँ को समझाने का प्रयत्न किया, इससे स्वामीजी अप्रसन्न हो सकते हैं। उत्तेजित होकर माँ ने कहा – ''मैं बोल रही हूँ, इसे लेकर जाओ।'' स्वामी प्रेमानन्द इस सेवक के साथ जब मठ लोटे, तब स्वामीजी बोले – ''स्वामी प्रेमानन्द के बुद्धिहीन कार्य को देखो। यह उस व्यक्ति को वापस ले आया।'' जब स्वामी प्रेमानन्द ने सारी बात स्वामीजी को बताई, इसके बाद स्वामीजी एक शब्द भी नहीं बोले।

माँ सारदा के पास सभी प्रकार के भक्त थे, कुछ पवित्र और गुणी थे, कुछ अपवित्र और पापी थे और कुछ विचित्र और पागल थे। जिस प्रकार व्यक्ति की पाँचों ऊंगलियाँ बराबर नहीं होतीं, उसी प्रकार माँ के सभी बच्चे बराबर नहीं थे। प्राय: माता अपने सबल बच्चों की अपेक्षा दुर्बल बच्चों के प्रति अधिक करुणामयी होती है।

माँ का एक युवा शिष्य, उद्बोधन भवन के उनके कमरे के उत्तरी बरामदे में अपनी निजी बातों के सम्बन्ध में माँ से चर्चा कर रहा था। वह विलाप कर रहा था, '' माँ, मैंने अपने बुरे कर्मों के कारण बहुत कष्ट भोगा है। आप मेरी गुरु हैं, मेरी इष्ट और सर्वस्व हैं। वास्तव में मैंने इतने पाप किए हैं कि आपको उन्हें बताने में मुझे लज्जा आ रही है। आपकी कृपा मेरी रक्षा कर रही है।'' माँ अपने हाथों से उसके सिर को सहलाते हुए बोलीं, ''इन सभी चीजों के बाद भी बेटा माँ के लिए बेटा ही होता है।'' माँ के स्नेह का स्पर्श पाकर युवक बोला, ''माँ, आप ठीक बोल रही हैं, मुझे आपकी बहुत कृपा प्राप्त हुई है, लेकिन मैं कभी नहीं सोच सकता कि आपकी कृपा सरलतापूर्वक उपलब्ध है।

सम्पन्न परिवार का एक शिक्षित नवयुवक, जयरामबाटी के पास के गाँव का निवासी था, उसने माँ सारदा से दीक्षा ली थी। उसने अपने गाँव में एक आश्रम स्थापित किया और बहुत सारे सामाजिक कार्य करता था। दुर्भाग्यवश उसका प्रेम-सम्बन्ध एक निकट सम्बन्धी की विधवा युवती के साथ हो गया। बातों-बातों में मिथ्या समाचार तेजी से फैल जाता है। जयरामबाटी के लोगों ने यह बात सुनी और भक्तों ने माँ सारदा से यहाँ आने को मना करने के लिए कहा। माँ अपने शिष्य के पतन के बारे में जानकर दुखी थीं, लेकिन उन्होंने कहा – ''मैं माँ हूँ। मैं उसे मिलने से कैसे मना कर सकती हूँ? ऐसे शब्द मेरे होठों से कभी नहीं निकलेंगे।'' वह व्यक्ति माँ के पास आता रहा और एक दिन वह उस स्त्री को लेकर माँ के पास आया। माँ ने परमात्मा का विधान मानकर उन्हें क्षमा कर दिया।

जयरामबाटी में एक विधवा युवती रहती थी, वह अत्यन्त गरीब थी और कठिन परिश्रम करके अपना जीवन-यापन करती थी। उसे यह भी नहीं मालूम था कि उसका पति कौन था और उसका विवाह कब हुआ था। जब वह बड़ी हुई, तब उसे ज्ञात हुआ कि वह विधवा है और उस समय हिन्दू विधवा दुबारा विवाह नहीं कर सकती थी। ऐसी लड़कियाँ प्राय: अपने माता-पिता अथवा पति के परिवार में एक महिला सेविका के रूप में रहती थीं। उसे माँ के घर में भक्तों का सामान ढोने के लिए बुलाया जाता था। माँ का उस विधवा युवती पर बहुत स्नेह था। बाद में उसका एक पुरुष से प्रेम हो गया और जब उनका प्रेम सम्बन्ध उजागर हुआ, तब

उस रुढ़िवादी समाज में बड़ी हलचल मच गई। समाज के पाषाण-हृदय वाले मुखिया लोग उसे दंडित करना चाहते थे। उसके अधिकांश जीवन में किसी ने उसकी सहायता करने या उसे शिक्षा देने के सम्बन्ध में नहीं सोचा और अब वे ही लोग उसकी भर्त्सना करने लगे। माँ सारदा ने उस युवती की कहानी सुनीं और उसके भविष्य के बारे में चिन्तित हो गईं। माँ ने उस युवती के कल्याण के लिए पूरे हृदय से ईश्वर से प्रार्थना की। ईश्वर ने माँ सारदा की प्रार्थना का उत्तर दिया। पड़ोसी गाँव का एक धनी जमींदार, जो माँ का शिष्य था, उसने हस्तक्षेप करते हुए गाँव के प्रमुख लोगों से उस स्त्री के प्रति करुणापूर्ण व्यवहार करने का स्मरण दिलाया। गाँव में शान्ति हो गई। माँ ने राहत की साँस ली। जब वह जमींदार माँ को प्रणाम करने आया, उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक उसे आशीर्वाद दिया और बोलीं, ''बेटा तुमने उस गरीब लड़की को संकट से बचा लिया। मैं बहुत प्रसन्न हूँ और भारमुक्त अनुभव कर रही हूँ। इस बीच-बचाव के लिए ईश्वर तुम पर कृपा करें।''

स्वामी केशवानन्द ने १९१९ में कोआलपाड़ में घटित एक महत्त्वपूर्ण घटना का वर्णन किया –

एक दिन मैंने माँ से कहा, ''माँ आपका स्वास्थ्य ठीक

कोआलपाड़ा आश्रम

नहीं है और यदा-कदा आप बीमारी से कष्ट झेल रही हैं। जो महिला आपके लिए भोजन बनाती है, आप जानती हैं, उसका चरित्र संदिग्ध है। यदि आप मुझे अनुमति दें, तो मैं आपके लिए दूसरी रसोई बनानेवाली ढूँढ़ सकता हूँ।'' मेरी बातों को सुनने के बाद, माँ अत्यन्त गम्भीर हो गईं और फिर बोली, ''यदि तुम चाहते हो, तो तुम उससे मुक्त हो सकते हो, लेकिन मैं यदि उसे त्याग दूँ, तो फिर वह कहाँ जायेगी?'' मैं तत्काल माँ के चरणों में गिर पड़ा और उनसे क्षमा माँगने लगा। ''माँ, मैंने बहुत बड़ा अपराध किया है। माँ, कृपा करके मुझे क्षमा कर दो।'' इस प्रकार का आश्वासन कौन दे सकता है, ''यदि मैंने उसे त्याग दिया, तो वह कहाँ जायेगी?'' हम जैसे भी हों, हम माँ की संतान के सिवाय अन्य कुछ भी नहीं हैं। उन्होंने स्वयं कहा है, ''यदि मेरे बच्चे गंदगी से सने हुए हैं, तो मुझे उनकी गंदगी साफ करके, उन्हें अपनी गोद में लेना होगा। मैं उनकी सच्ची माँ हूँ, सौतेली माँ नहीं।''

माँ सारदा सर्वज्ञ और पतितों की रक्षक थीं। स्वामी भूमानन्द ने अपने प्रत्यक्षदर्शी विवरण में लिखा है कि एक प्रसिद्ध अभिनेत्री जिसने अपना जीवन पाप-कर्म करते हुए व्यतीत किया था, माँ के पास कष्टों से मुक्ति का आशीर्वाद माँगने आई थी।

एक दिन प्रात: आठ बजे एक स्त्री कार से उद्‌बोधन-भवन आई। वह सीधे सीढ़ियों की ओर गई, जैसे वह घर से परिचित हो। बाद में मुझे पता चला कि वह पहली बार आई है। माँ अपने कमरे में योगीन माँ, गोलाप माँ और डॉ. अघोरनाथ घोष की पत्नी के साथ थीं। माँ उन लोगों से बात कर रही थीं, तभी अचानक माँ ने उन लोगों से कहा, ''थोड़ा ठहरो। मैं शीघ्र आती हूँ।'' माँ अपने कमरे से निकलकर सीढ़ी की ओर गईं।

सीढ़ी पर जो महिला थी, वह प्रसिद्ध अभिनेत्री थी। वह सीढ़ी की रेलिंग पर सिर रखकर रो रही थी। माँ नीचे आईं, उसके सिर को स्पर्श कीं और स्नेहपूर्वक गले से लगा लीं। फिर माँ ने उससे कहा ''जब तुम ठाकुर के पास आ गई हो, तो तुम्हें अब नहीं रोना पड़ेगा।'' यह आश्वासन सुनकर महिला और अधिक जोरों से रोने लगी। माँ उसे ऊपर ले गईं और अपने आँचल के कोने से उसके आँसुओं को पोछ दीं। उन्होंने कहा, अब ठाकुर के पास जाओ और प्रसन्नचित्त से उनको प्रणाम करो।''

ऊपरी बरामदे में उस अभिनेत्री ने पहले माँ को प्रणाम किया, माँ ने उसके सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। माँ ने उसकी ठुड्डी को भी छूकर अपनी ऊंगलियों को चूमा, यह अपने प्रेम और स्नेह को व्यक्त करने का उनका ढंग था। वे अभिनेत्री को पूजा-कक्ष (मंदिर) में ले गईं। वेदी पर

ठाकुर के चित्र को दिखाते हुए उन्होंने कहा, ''अब ठाकुर को प्रणाम करो।'' उस दिन दोपहर अभिनेत्री ने माँ के पास बैठकर प्रसाद ग्रहण किया, उन्होंने अपने भोजन का कुछ भाग उसे दिया।''

दूसरे समय माँ कोआलपाड़ा के जगदम्बा आश्रम में रहती थीं। निम्न जाति के परिवार की एक युवती जो प्रेम-प्रसंग में छली जा चुकी थी, माँ से शिकायत की कि उसके प्रेमी ने अचानक उसे छोड़ दिया है। अपनी दुखभरी कहानी माँ को सुनाते हुए वह बहुत रो रही थी। उसने अपने परिवार और निकट सम्बन्धियों को, उसके साथ रहने के लिए छोड़ दिया और अब वह पूरी तरह असहाय है। उसके दुख से प्रभावित होकर माँ ने उस व्यक्ति को बुलवाया और उसे प्रेम से डाँटते हुए समझाया, ''इस लड़की ने तुम्हारे लिए सभी चीजों और सभी लोगों को छोड़ दिया, तुमने लम्बे समय तक उसकी सेवाएँ ली है। यदि तुम अब उसे छोड़ोगे, तब तुम बड़े पाप के भागी बनोगे। तुम्हे नर्क में भी स्थान नहीं मिलेगा।'' माँ की बातें उसके हृदय में प्रवेश कर गईं, उसका हृदय परिवर्तित हो गया और वह उस लड़की को लेकर घर चला गया।

दूसरों का दोष देखना माँ सारदा के लिए सम्भव नहीं था और दूसरे लोग दोष करें, यह भी उन्हें पसन्द नहीं था। एक बार जयरामबाटी में कुछ भक्तों ने माँ सारदा से शिकायत की, उनका कोई पूर्व सेवक, जो अब ऋषिकेश में रहता है, वह वहाँ साधुओं से झगड़ा कर रहा था। उन लोगों ने आगे कहा, ''आपकी लम्बे समय तक सेवा करने के पश्चात् इस प्रकार के कुसंस्कार उसमें कैसे हो सकते हैं?'' जब वे चले गए, तब माँ सारदा ने ब्रह्मचारी बरदा से कहा – ''बेटा, मैं, अब और किसी के दोषों को देख या सुन नहीं सकती। व्यक्ति को अपने पूर्वकर्मों का फल तो भोगना होगा। यदि किसी को गहरा घाव होनेवाला होता, तो उसे कम से कम एक सूई तो चुभेगी। वे लोग 'अ' की गलतियों के बारे में मुझसे बात कर रहे थे, लेकिन उन दिनों वे लोग कहाँ थे? उसने बहुत अच्छे ढंग से मेरी सेवा की। उन दिनों मैं अपने भाई के परिवार के साथ रहती थी और मैं धान उबालती, फिर भूषी निकालती थी। मुझे घर गृहस्थी के सभी काम करने पड़ते थे, क्योंकि मेरी भाभी बहुत छोटी थी। ठंड या वर्षा की परवाह किए बिना, 'अ' लकड़ी के चूल्हे से उबले हुए धान के बड़े बर्तन लाने मे मेरी सहायता करता था। अब बहुत भक्त आते हैं, लेकिन, तब मुझे कौन मदद कर रहा था, क्या मैं सब भूल जाऊँगी? लोगों को दोष नहीं देना चाहिए। पहले मैं लोगों की गलतियों को देखती थी। बाद में मैंने रो-रोकर ठाकुर से प्रार्थना की ''ठाकुर मैं कभी भी किसी के दोष ना देखूँ। इस प्रकार लम्बी प्रार्थना के बाद में इस बुरी आदत से मुक्ति हो सकी।''

माँ सारदा सदैव अपने बच्चों के सद्‌गुणों को देखती थीं। श्रीरामकृष्ण देखने-परखने के बाद शिष्य बनाते थे, लेकिन माँ बिना किसी भेदभाव के जो भी आता, उसे अपना शिष्य स्वीकार कर लेती थीं। सच्ची माता के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह केवल अच्छे बच्चों को स्वीकार करे और बुरे बच्चों को त्याग दे।

एक बार 'म' किसी भक्त के व्यवहार से इतने आहत हो गए थे कि उन्होंने माँ से प्रार्थना की कि वे उसे अपने आसपास आने की अनुमति न दें। माँ ने उत्तर दिया, ''यदि मेरा पुत्र धूल और गंदगी से अपने पैरों को मैला कर ले, तो मुझे ही साफ कर उसे अपनी गोद में लेना होगा।''

श्रीरामकृष्ण के उच्छृंखल भक्त गिरीश घोष ने कहा था, ''ठाकुर ने मेरे जैसे घोर पापी को शरण दी। यदि मुझे यह ज्ञात होता कि मेरे पापों को फेंकने के लिए इतना बड़ा कचरे का डिब्बा है, तो मैं अपने जीवन में और आनन्द उठाया होता।[५२] ठाकुर की भाँति माँ ने बहुत सारे संदिग्ध चरित्रवाले लोगों को शरण दी थी। यद्यपि उनके पापों से माँ का पूरा शरीर जलता था, लेकिन कोई असंतोष प्रकट किए बिना, वे चुपचाप सहन करती थीं।

एक दिन दोपहर बाद जब दर्शनार्थी चले गए, ब्रह्मचारी बरदा ने देखा, माँ सारदा बार-बार अपने पैरों को घुटने तक धो रही हैं। जब उनसे कारण पूछा गया, तो माँ ने उत्तर दिया, ''किसी को भी मेरे पैरों पर सिर रखकर प्रणाम करने की अनुमति प्रदान मत करो। इस प्रकार सारे पाप मेरे शरीर में प्रवेश कर जाते हैं और मेरे पैरों में जलन होती है। इसलिये मुझे पैरों को धोना पड़ता है। इसके कारण मैं बीमार होकर कष्ट भोगती हूँ। लोगों को दूर से प्रणाम करने के लिए बोलो।'' उसके बाद उनका मन बदल गया और बोलीं, ''बेटा, शरत (स्वामी सारदानन्द) को यह मत बताना। वह प्रणाम करना पूरी तरह बन्द करवा देगा।''

संसार के महान गुरु सत्य के साथ समझौता नहीं करते। यहाँ तक कि अवतार भी सभी को सन्तुष्ट नहीं कर सकते, क्योंकि हर व्यक्ति भिन्न है। कभी-कभी महापुरुषों के कार्यों को लोग गलत समझ लेते हैं, क्योंकि लोग अपने दृष्टिकोण के द्वारा उनका आकलन करते हैं। एक बार एक पतित स्त्री उद्‌बोधन-भवन आई और माँ के चरणों मे गिर पड़ी। माँ ने उसे हृदय से लगा लिया और बोलीं – ''मेरे पास आओ बेटी। अब तुम्हें अनुभव हो गया, पाप क्या है। तुमने पश्चात्ताप किया है। मैं तुम्हें मंत्र प्रदान करूँगी। अपने आपको ठाकुर के चरणों में समर्पित कर दो। डरो मत बेटी।'' बागबाजार की कुछ कुलीन महिलाएँ और बलराम की पत्नी कृष्णभाविनी ने सुना कि माँ ने एक पतित स्त्री को शरण दी है, अत: उन्होंने दूर रहने का निर्णय लिया। कृष्णभाविनी ने गोलाप-माँ को यह बताया और उसने माँ सारदा से कहा। माँ ने कहा, ''जो मेरे शरणागत हैं, वे यहाँ आएँगे। यदि किसी का मेरे पास आना, दूसरों को यहाँ आने से रोकता है, तो मैं क्या कर सकती हूँ?'' बाद में कृष्णभाविनी माँ के पास आई और अपने अनुचित निर्णय के लिए क्षमा माँगी।

बेलूड़ मठ से स्वामी श्यामानन्द नियमित रूप से कलकत्ता खरीददारी करने आते थे। ज्वार-भाटा होने पर वे किराना सामान लेकर नाव द्वारा सीधे बेलूड़ मठ चले जाते थे। अन्यथा वे उद्‌बोधन-भवन आकर स्नान करते और भोजन प्रसाद ग्रहण करते थे। एक बार वे दोपहर में दो बजे आए, जब सब लोग भोजन कर चुके थे। क्रोधित होकर गोलाप-माँ बोली – ''वह हमें पहले से नहीं बताता कि वह दोपहर में भोजन करने आएगा। हमारे लिए और उसके लिए भी अधिक सुविधाजनक होगा, यदि वह सुबह में हमें सूचित कर दे।'' गोलाप-माँ की बात को माँ ने सुन लिया और अपने कमरे से बाहर आईं। माँ ने कहा, ''देखो, हमारा परिवार दिनोंदिन बढ़ रहा है। प्रतिदिन हमें कुछ लोगों के लिए अतिरिक्त भोजन बनाना होगा। क्या करें?''

गोलाप-माँ बोली, ''क्षुदी (स्वामी श्यामानन्द) प्राय: आता है, लेकिन वह हमें नहीं बताता कि भोजन के लिए कब रुकेगा।''

माँ सारदा बोलीं, 'जाने दो।' ''उसको भोजन जल्दी परोस दो। बहुत देर हो गई है। मेरा बेटा बहुत काम करके आया है।''

गोलाप-माँ ने कहा, ''तुम्हारा उस पर बहुत स्नेह है। ऐसा प्रतीत होता है कि वह तुम्हारा ससुर है।'' (माँ सारदा के ससुर का नाम क्षुदीराम था, और और स्वामी श्यामानन्द का भी संन्यास के पूर्व का नाम क्षुदीराम था।)

माँ सारदा ने कहा, ''हाँ, तुम ठीक कह रही हो। ये लड़के मेरे श्रद्धेय ससुर के समान हैं। ये मेरे अपने हैं।''

स्वामी महादेवानन्द बताते हैं – जुलाई का महीना था और निरन्तर वर्षा हो रही थी। मैं कोआलपाड़ा आश्रम से कुछ सब्जी लेकर जयरामबाटी गया। जब माँ ने मुझे देखा, तो बोलीं, ''तुम आए हो, बहुत अच्छा ! कुछ दिनों से यहाँ कोई नहीं आया है। किराना सामान की कमी है। आज तुम यहाँ रुको और हमारे लिए कुछ खरीददारी कर दो।'' दोपहर में, मैं मिट्टी तेल, आटा, शक्कर, घी, मिश्री और कुछ अन्य वस्तुएँ खरीदने हल्दीपुकुर बाजार गया। सभी वस्तुओं का वजन लगभग एक मन था। दुकानवाले ने मुझसे कहा ''कि इतना भारी वजन लेकर जाना मेरे लिए कठिन होगा।'' तुम्हारे लिए कुली बुला देता हूँ। मैं सोच रहा था, माँ ने मुझे कुली लगाने के लिए नहीं कहा था, इसलिए मैंने कहा – ''मुझे कुली की आवश्यकता नहीं है। मैं इसे लेकर जा सकता हूँ। कृपा करके टोकरी मेरे सिर पर रख दो। उस टोकरी को लेकर कुछ दूर जाने पर मुझे उसके वजन का अनुभव हुआ है और सिर में दर्द भी हुआ। वर्षा हो रही थी। मैंने एक हाथ से छाता टोकरी के ऊपर रखा और दूसरे हाथ से टोकरी को सम्भाला। रास्ता फिसलन भरा था, मैं सम्हलकर चल रहा था। मैं पूरा रास्ता चलकर जाने के लिए दृढ़-प्रतिज्ञ था। रास्ते पर बैलगाड़ी को पार करने के लिए एक ढलान था, जब मैंने उसे पार किया, तो मैंने अनुभव किया कि पूरा वजन हलका हो गया। मुझे समझ में नहीं आया कि क्या हुआ, मैं एक मिनट रुका। उसके बाद बिना किसी कष्ट के मैं, माँ के घर पहुँच गया। मैं जब घर पहुँचा, तो माँ अपने बरामदे में टहल चल रही हैं। उनका चेहरा लाल था और आँखें फूली हुई थीं। माँ अपने आपसे प्रश्न कर रही थीं, ''मैंने उसे कुली करने के लिए क्यों नहीं कहा?'' जब मैंने टोकरी नीचे उतार दी, तो उन्होंने पूछा – ''तुमने कुली क्यों नहीं किया? तुम्हें इतना भारी वजन नहीं ढोना चाहिए।'' **(क्रमश:)**

श्रीरामकृष्ण-गीता (३२)

सातवाँ अध्याय (७/१)

स्वामी पूर्णानन्द, बेलूड़ मठ

सप्तमोऽध्यायः

धर्मोपलभ्य वस्तु

श्रीरामकृष्ण उवाच

किन्नु जानासि शास्त्रस्य कियत्कालं विचारणम्।
यावद्धि सच्चिदानन्दोऽसौ प्रत्यक्षीकृतो भवेत्।।१।।

– श्रीरामकृष्ण ने कहा – शास्त्र-विचार कब तक करते हैं, जानते हो क्या? जब तक उस सच्चिदानन्द का साक्षात्कार न हो जाये।।१।।

यावन्न कुसुमासीनास्तावद् गुंजन्ति षट्पदाः।
नीरवाः पुष्पमासाद्य मधुपानरता यदा।।२।।

– जैसे भ्रमर जब तक पुष्प पर नहीं बैठता है, तब तक गुन-गुन गुंजार करता रहता है। किन्तु जब पुष्प पर बैठकर मधु का पान करने लगता है, तब बिलकुल चुप हो जाता है, कोई आवाज नहीं करता।।२।।

श्रीमहाराज उवाच

केशवचन्द्र आगम्य महात्मा सेनवंशजः।
सन्नेकदा स जिज्ञासुर्दक्षिणेश्वरमन्दिरम्।
अथ पप्रच्छ देवं तं परमहंससमादरात्।।३।।

– श्रीमहाराज ने कहा – एक दिन महात्मा केशव चन्द्र सेन ने दक्षिणेश्वर में आकर परमहंस देव से श्रद्धापूर्वक पूछा –

शास्त्राण्यधीतान्यपि पण्डितैर्वा
इहैव पुंभिर्बहुभिस्तु भूयः।
ज्ञानं कथं जातु परन्तु तेषां
मनाङ् न जायेत ततोऽपि सम्यक्।।४।।

– बहुत से पण्डित विस्तृत शास्त्र का अध्ययन करते हैं, इसके बाद भी उन्हें सम्यक् ज्ञान क्यों नहीं होता?।।४।।

श्रीरामकृष्ण उवाच

उच्चैरुड्डीयमानाः खे चिल्लगृध्रादयः खगाः।
निबद्धा दृष्टयस्तेषां सदेव कुणपादिषु।।५।।

– श्रीरामकृष्ण देव ने कहा – जैसे चील, कौए आदि आकाश में बहुत ऊँचे उड़ते हैं, किन्तु उन सबकी दृष्टि सर्वदा मरे पशुओं, मरघट पर ही होती है।।५।। **(क्रमशः)**

कविता

धन्य धन्य अध्यात्म शिरोमणि

विजय कुमार श्रीवास्तव

पावनता, निःस्वार्थरूपता, त्याग, प्रेम-करुणा के कंगन,
जिन्हें पहनकर दिव्य सारदा, माँ करती उनका अभिनन्दन ।
जिन्हें विवेकानन्द सदृश ध्रुव, पाकर बन जाते ध्रुवतारा,
उनके ऊपर है न्यौछावर, पुण्य धरा का पावन सारा ।।
मानवता का सहज हृदय ले, जिसने झेले लाख बवंडर,
जीव-साधना के अन्तर्गत, जीवों के प्रति रहकर तत्पर।
आत्मशुद्धि से आत्म तृप्ति कर, जिसने पाया शिष्य अनोखा,
वह ही राम, कृष्ण भी वह ही, कंचन जैसा मानव चोखा।।
ज्ञान, ध्यान-संज्ञान न होता, तो होते माया के बंधन,
कृत्रिम सान्त्वना देने के हित, आ जाते भटके कितने जन।
किन्तु नहीं छू पाये उनको, मिथ्या जग के भव्य प्रलोभन,
इसीलिए तो मानवता हित, बीता उनका सारा जीवन ।।
युग-युगान्तरों के पल बीते, चढ़ते-गिरते, धीरे-धीरे,
समय जान पाया मुश्किल से, उनमें कितने मोती-हीरे ।
जीवन की दुर्गम राहों में, शिष्य विवेकानन्द सरीखा,
जिसके आदर्शों को पाकर, आद्य जगत ने जीना सीखा।।
रामकृष्ण तो नाम मात्र है, शुचिता उनकी जीवन-धारा,
जिनके एक इशारे पर ही, कट सकती जीवन की कारा।
माँ काली के कृपा-पात्र बन, धर्म-धुरी पर करके नर्तन,
हृदय छुये जिन-जिन जीवों के उनमें किया दिव्य परिवर्तन।।
रामकृष्ण प्रायः बतलाते हैं उतने पथ मत जितने,
चाह जिसे पाने की माखन, झूठे देखे ना सपने।
भक्ति प्रेममय और समर्पण जिसके जीवन की थाती,
माँ की कृपा उसी प्रिय जन को, पग-पग पर है सरसाती ।।
परमहंस थे रामकृष्ण, थी उनकी हंसों की टोली,
वहीं सारदा माँ भरती थीं, ममता से सबकी झोली।
एक सच्चिदानन्द परम गुरु और न गुरु, स्वामी, बाबा,
कहते प्रायः रामकृष्ण, सेवामय जिनकी थी आभा।।
लीलामय, अवतारी, पावन, जगदगुरु का जिनमें बल,
रह विनम्र औदार्य सहित वे, थे जिन भक्तों के संबल।
जीवन के शाश्वत मूल्यों से, जीना जिसने सिखलाया,
धन्य-धन्य अध्यात्म शिरोमणि, रामकृष्ण जग को भाया।।

गीतातत्त्व-चिन्तन

बारहवाँ अध्याय (१२/७)

स्वामी आत्मानन्द

(ब्रह्मलीन स्वामी आत्मानन्द जी महाराज रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के संस्थापक सचिव थे। उनका 'गीतातत्त्व-चिन्तन' भाग-१ और २, अध्याय १ से ६वें तक पुस्तकाकार प्रकाशित हो चुका है और लोकप्रिय है। ८वाँ अध्याय 'विवेक ज्योति' के सितम्बर, २०१६ से नवम्बर, २०१७ अंक तक प्रकाशित हुआ था। अब प्रस्तुत है १२वाँ अध्याय, जिसका सम्पादन ब्रह्मलीन स्वामी निखिलात्मानन्द जी ने किया है। – सं.)

ज्ञानी भक्त के गुण

कर्मफलत्याग सर्वश्रेष्ठ साधना कैसे?

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्ध्यानं विशिष्यते।
ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ।।१२।।

अभ्यासात् ज्ञानम् श्रेय: (अभ्यास से ज्ञान श्रेष्ठ है) ज्ञानात् ध्यानम् विशिष्यते (ज्ञान से ध्यान श्रेष्ठ है) ध्यानात् कर्मफलत्याग: (ध्यान से भी कर्मफलत्याग) हि त्यागात् अनन्तरम् शान्ति: (क्योंकि त्याग से तत्काल परम शान्ति होती है)।

''अभ्यास से ज्ञान श्रेष्ठ है, ज्ञान से ध्यान श्रेष्ठ है और ध्यान से भी कर्मफलत्याग, क्योंकि त्याग से तत्काल परम शान्ति होती है।''

इस बारहवें श्लोक का अर्थ वैसे तो स्पष्ट है, पर इसका सन्दर्भ ठीक ढंग से जुड़ नहीं पा रहा है। इसमें कहा गया है – अभ्यास की अपेक्षा ज्ञान श्रेयस्कर है। ज्ञान की अपेक्षा ध्यान विशिष्ट है। ध्यान से कर्मफल के त्याग की विशेषता अधिक है। त्याग से अविलम्ब परम शान्ति प्राप्त होती है। यहाँ पर कर्मफल के त्याग को भगवान सबसे ऊपर का दर्जा देते हैं और कहते हैं, 'अर्जुन ! जैसे ही जीवन में त्याग आता है, वैसे ही मनुष्य को शान्ति प्राप्त हो जाती है।'

एक प्रकार का कर्म वह होता है, जिसमें मैं और मेरा दोनों विद्यमान होते हैं। उसमें प्रकृति यह रहती है कि कर्म का करनेवाला मैं हूँ और कर्म का फल मुझे मिलेगा। संसार में अधिकतर मनुष्यों में यही भावना विद्यमान रहती है, तो कर्म करने में भी मैं-पन बना रहता है और कर्मफल के लिए भी मेरा-पन बना रहता है। यह संसारी का भाव है। दूसरे प्रकार में अहंकार बना रहता है। व्यक्ति संसार के कर्म करता है और कर्मों के पीछे अहंकार की भावना बनी रहती है। वह अहंकार से प्रेरित होकर कर्म करता है। उसके मन में कर्तापन का अभिमान रहता है। परन्तु वह व्यक्ति कर्म के फल पर से अपना ममत्व हटा लेता है, फल का अधिकार भगवान को सौंप देता है। यह साधक का भाव है।

तीसरे प्रकार के कर्म का साधक वह है, जो अपने मन में यह नहीं लाता कि कर्म वह कर रहा है और कर्म का अहंकार भी भगवान को ही दे देता है। उसका भाव रहता है, 'प्रभो ! तुम्हीं मुझसे कर्म करा ले रहे हो। तुम्हीं मुझे कर्म करने की प्रेरणा देते हो। जिस तरह से कर्म करने के लिए तुम मेरी बुद्धि को प्ररित करते हो, उसी तरह से मैं कर्म में प्रवृत्त होता हूँ।'

तात्पर्य यह है कि संसार में जब तक रहेंगे, तब तक कर्म तो होते ही रहेंगे। सांसारिक कर्म होंगे। स्वार्थयुक्त कर्म होंगे। मनुष्य पूरी तरह तो स्वार्थ से ऊपर उठ नहीं सकता। अधिकतर मनुष्य अहम् को छोड़ नहीं सकते। कर्तापन का भाव उनमें बना ही रहता है। ऐसे जो सांसारिक क्रियाओं में आबद्ध लोग हैं, जिन्हें स्वार्थयुक्त कर्म करने ही पड़ते हैं, वे सब कर्मों के फल का त्याग करते चलें।

फल का अधिकार भगवान को देने की बात कहना तो सर्वथा असंगत है, क्योंकि फल के अधिकारी तो भगवान हैं ही। परीक्षार्थी का अधिकार वहीं तक है कि वह अपनी योग्यता के अनुरूप पर्चे का उत्तर लिख दे। उसके अनुरूप अंकों की माँग करने का अधिकार तो भगवान ने हमें दिया

है, परन्तु मनुष्य तो अपने कर्मों के फलों को भी अपने ही लिए चाहने लगता है। हम जो भी क्रिया करते हैं, उसके साथ क्रिया करते समय हमारी भावनाओं का योग होता रहता है। मन में उठनेवाले विचारों की छाप जाकर कर्म के ऊपर लगाती है। यही कर्म सूक्ष्मरूप से संचित होते जाते हैं और इनमें तदनुरूप फल देने की सामर्थ्य होती है। इस सामर्थ्य को अपूर्व के नाम से पुकारा जाता है। अपूर्व क्रिया में निहित वह शक्ति है, जिसके द्वारा मनुष्य को क्रिया का फल मिला करता है। इस प्रकार हमारी भावनाओं की छाप लगा हुआ जो कर्मों का सूक्ष्मस्वरूप है, उसको हम संस्कार के नाम से पुकारते हैं। ये ही संस्कार अपने अनुरूप फल प्रदान करते हैं, जिनको हम कर्मों के फल के नाम से जानते हैं। अत: अपूर्व वह शक्ति है, जिसके द्वारा मनुष्य अपने कर्मों का फल प्राप्त करता है। मनुष्य इस अपूर्व शक्ति का अधिकार स्वयं लेना चाहता है। यह उसकी भूल है। अपूर्व तो भगवान की शक्ति है और फल का अधिकार भी भगवान का ही है। भगवान तो हमें कर्म के फल का त्याग करने को कहते हैं, वे हमसे कुछ माँगते नहीं हैं, हमने ही तो बलपूर्वक उनके अधिकार को अपना बना रखा है। बस उसे ही छोड़ देने को कहते हैं। **यतात्मवान्** सम्बोधन साधक के लिए है, जिसकी थोड़ी-सी इच्छा है कि वह अपनी इन्द्रियों का संयमन करे, साधना करे। सब कर्मों का फल त्यागपूर्वक करना कर्मों की चौथी श्रेणी है।

साधक तो यही चाहेगा कि साधना वही करे, जिसका स्तर सबसे ऊपर हो। किसी भी साधना को करने की तैयारी या मानसिकता तो पहले से होनी चाहिए। धीरे-धीरे ही ऊपर उठा जा सकता है। अनुपात में से होकर जाने पर ही सारी साधना सधती है। मनुष्य के मन में यह तरंग न उठे कि वह एकदम से अपने चित्त को भगवान में स्थित कर देगा।

कर्मफल के त्याग से मानसिक सन्तुलन की प्राप्ति

एक दृष्टि से देखा जाए, तो आध्यात्मिक क्षेत्र में कर्मफल-त्याग सर्वोच्च साधना है। जब यथार्थ में कर्मफल-त्याग सध जाता है, तब उसके बाद और किसी साधना की आवश्यकता नहीं होती। कर्म के फल के त्याग का अर्थ है कि अपने कर्म में असफलता मिलने पर उद्विग्न न हो और कर्म में सफलता प्राप्त होने पर आनन्द से उद्वेलित न हो। किसी भी दशा में अपना सन्तुलन न खोए। जिस किसी से भी अनुकूल और प्रतिकूल, दोनों परिस्थितियों में सम रहने की तथा इस प्रकार कर्मफल के त्याग की साधना सध गई, वह तो सर्वोच्च स्थान पर पहुँच ही गया। अत: कर्मफल का त्याग साधना भी है और सिद्धि भी है। जिस प्रकार भक्ति को हम साधना भी मानते हैं और सिद्धि भी। भगवान का भजन, अपने चित्त को भगवान में डालने का प्रयत्न, यहाँ से साधना शुरु करते हैं, वह भी भक्ति है और चित्त जब पूरी तरह भगवान में रम गया हो, वह भी भक्ति है।

इसीलिए भगवान यहाँ बारहवें श्लोक में कहते हैं, 'जो सिद्धि तुम्हें अपने चित्त को सम्यक् रूप से भगवान में स्थित करके मिलती है, वही सिद्धि तुम्हें कर्मफल के त्याग के द्वारा भी मिल जाएगी।' ज्योंही कर्मफल-त्याग की साधना सधी, मनुष्य निरपेक्ष हो जाता है। जो निरपेक्ष हो जाता है, उसके जीवन में शान्ति उतर आती है। शान्ति से वह लबालब भर जाता है। तो भगवान ने कहा, 'अभ्यास की अपेक्षा ज्ञान श्रेयस्कर है। ज्ञान की अपेक्षा ध्यान श्रेयस्कर है।' हम सोचने लगेंगे, भगवान ने ऐसा क्यों कहा? ज्ञान तो सबसे ऊँची बात है। **ऋते ज्ञानात् न मुक्तिः, ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा** – ज्ञान के बिना मनुष्य को मुक्ति नहीं मिलती। ज्ञान की अग्नि सब कर्मों को जलाकर भस्मसात् कर देती है। तब भगवान ने यहाँ ध्यान को ज्ञान से बढ़कर कैसे बता दिया?

हमने देखा, साधनाएँ दो प्रकार की होती हैं। एक सगुण ईश्वर को लेकर चलती है और एक निर्गुण को लेकर। ज्ञानी की साधना निर्गुण को लेकर होती है। ज्ञानी की साधना में ज्ञान तो सर्वोच्च होता ही है, परन्तु यहाँ चर्चा हो रही है, सगुण ईश्वर के उपासक की, भक्त की। उसकी जो संसार के कर्म करता है। वह भक्त जो भगवान के चरणों में अपने मन और अपनी बुद्धि को सौंपना चाहता है। ज्ञानी भगवान को नहीं मानता। वह तो कहता है – आत्मा और ब्रह्म ! वही एक ब्रह्म है, जो आत्मा होकर मुझमें रमा है। ज्ञानी का लक्ष्य है कि इसी आत्मा को ब्रह्म के साथ युक्त देखे, जो आत्मा अज्ञान के आवरण के कारण ब्रह्म से भिन्न भासता है। ज्ञानी की सारी साधना इसी के लिए है कि वह ब्रह्म और आत्मा का ऐक्य देख सके, उसका अनुभव कर सके।

इसीलिए जब भगवान की बात आती है, फल को सौंपने की बात आती है, तब वह भक्त की साधना होती है। भक्त की साधना भक्ति की साधना है। उसमें ज्ञान से बढ़कर ध्यान होता है। अपने आपको जब हम किसी एक नियम में

बाँधकर यन्त्रचालित-से उस नियम को पूरा करते हैं, पूजा, पाठ, ध्यान-जप, मन्दिर जाकर विग्रह का दर्शन आदि, उसे कहते हैं अभ्यास। इस अभ्यास से बढ़कर ज्ञान है। ज्ञान में हमारी भावना जागती है, जिज्ञासा जागती है कि जिनकी मैं उपासना करने जा रहा हूँ, वे परमेश्वर कौन हैं? समझ में आता है कि वे ही तो हैं, जो मेरे मन के नियन्ता हैं। तब अपने मन को उनमें न लगाकर क्यों इधर-उधर भटकाऊँ? ऐसा विचार ज्ञान के ही द्वारा आता है। ज्ञान हमें भगवान के स्वरूप का बोध कराता है कि ईश्वर सर्वमय हैं, सर्वव्यापी हैं। उन्हीं की शक्ति से मेरे मन में विचारों का स्पन्दन होता है। उन्हीं की शक्ति से मेरे शरीर की सब क्रियाएँ होती हैं।

ऐसे इस ज्ञान से हमारा यन्त्रवत् होनेवाला अभ्यास गौण है। ज्ञान के द्वारा पढ़कर या सुनकर ईश्वर-विषयक जानकारी प्राप्त करते हुए हमारा मन उन्हीं में रमा रहता है। जैसे-जैसे भगवान के स्वरूप का ज्ञान बढ़ता है, वैसे-वैसे उनके स्वरूप में मन अधिकाधिक रमता है। भगवान के स्वरूप का ज्ञान होकर हमें जब यह बोध होता है, एकमात्र वही हमारे प्रेम के अधिकारी हैं, तब हमारे हृदय का सारा प्रेम उन्हीं के चरणों की ओर जाता है, इधर-उधर जाने की इच्छा ही नहीं करता।

तो जैसे-जैसे ज्ञान बढ़ता जाएगा, वैसे-वैसे हमारा ध्यान तीव्र होता जाएगा। ध्यान का अर्थ यह है कि जिस ईश्वर के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की, उस ईश्वर में हमारा मन लयलीनता को प्राप्त हो जाए। उसके चरणों में हमारा मन एकाग्र हो जाए। ईश्वर को जब हम बाहर देखने का प्रयास करते हैं, तो वह कर्म का हेतु बनता है। उसमें वासना जुड़ जाती है और मन के भीतर भगवान को देखना चाहना, उनका चिन्तन करना, ध्यान का कारण बनता है।

भगवान के स्वरूप, उनकी लीला, उनके धाम के सम्बन्ध में हमने सुन और पढ़कर जो ज्ञान प्राप्त किया, उसी के फलस्वरूप हमारे ध्यान की तीव्रता बढ़ती है। हम भीतर जाने लगते हैं। भगवान के ही चरण-कमलों में हमारा मन-मधुप बसेरा कर लेता है। जीवन में जितना भी पराग, जितना भी माधुर्य मिलेगा, वह उन्हीं के चरणों में मिलेगा। यह ज्ञान हो जाने पर मन फिर संसार में माधुर्य खोजने क्यों जाएगा? विषयों की ओर क्यों दौड़ेगा? इसीलिए भगवान ने बताया कि ज्ञान से ध्यान अधिक श्रेयस्कर है।

ध्यान करनेवाले व्यक्ति का मन कुछ काल के लिए भगवान के चरणों में लीन हो भी जाए, तो भी परिस्थितियों के प्रतिकूल हो जाने पर वह विचलित हो जाता है। परिस्थितियों के अनुकूल रहने पर आनन्दोद्वेलित हो जाता है। इसीलिए कहते हैं कि ध्यान से भी वह अवस्था अधिक श्रेयस्कर है, जब अनुकूल और प्रतिकूल सब तरह की परिस्थितियों में हमारे मस्तिष्क का सन्तुलन बना रहता है, विचलित हुए बिना भगवान के चरणों में ही लगा रहता है। परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहनेवाला मन ध्यान में लगा रह नहीं सकता। ध्यानस्थ मन इस तरह विचलित हो सकता है, पर कर्मफलत्यागी का मन कभी विचलित नहीं होता। यह भगवान की वाणी है और इसीलिए कहा कि कर्मफल का त्याग जब जीवन में सध जाता है, तभी मन को शान्ति मिलती है। मनुष्य आश्चर्य कर सकता है कि जिस मन पर अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थितियों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता, वह क्या जड़वत् हो जाता है? भगवान कहते हैं, 'अर्जुन ! वह व्यक्ति जड़ नहीं, परम चैतन्यमय होता है।' उस व्यक्ति के जीवन से होनेवाले व्यवहार का वर्णन तैंतीस गुणों के रूप में आगामी श्लोकों में किया गया है। वे तैंतीस गुण जिनसे मनुष्य का मन गुणान्वित हो जाता है, हमारे जीवन के लिए अत्यन्त लाभकारी हैं। **(क्रमशः)**

पृष्ठ ११६ का शेष भाग

है, मैं उन्हें कहाँ खोजूँ, किस तरह से उन्हें पाऊँ, इसका मार्ग आप मुझे बताइए। शबरीजी संकोच में गड़ जाती हैं। इतना बड़ा गौरव प्रभु ने किसी बड़े से बड़े महात्मा को भी नहीं दिया। अन्य महात्माओं का भी पूर्ण सम्मान करते हैं, जिज्ञासा करते हैं, प्रश्न करते हैं, पर सीताजी को पाने की बात वे शबरीजी से ही पूछते हैं।

जनकसुता कइ सुधि भामिनी।
जानहि कहु करिबरगामिनी।। ३/३५/१०

हे भामिनी, आप जनकसुता के बारे में कुछ जानती हों, तो बताइये। शबरीजी विनम्र भाव से प्रभु की आज्ञा का पालन करते हुए श्रीराम से कहती हैं –

पंपा सरहि जाहु रघुराई।
तहँ होइहि सुग्रीव मिताई।। ३/३५/११

आप यहाँ से पंपासर की यात्रा कीजिए। वहाँ आपकी सुग्रीव से मित्रता होगी। बाद में उनके द्वारा जनकनन्दिनी सीता का समाचार आपको मिलेगा और आगे घटनाएँ घटेंगी। **(क्रमशः)**

प्रश्नोपनिषद् (४३)

श्रीशंकराचार्य

(सनातन वैदिक धर्म के ज्ञानकाण्ड को उपनिषद् कहते हैं। हजारों वर्ष पूर्व भारत में जीव-जगत् तथा उससे सम्बद्ध गम्भीर विषयों पर प्रश्न उठाकर उनकी जो मीमांसा की गयी थी, ये उन्हीं के संकलन हैं। वैदिक धर्म की पुनः स्थापना हेतु आचार्य ने इन पर सहज-सरस भाष्य लिखकर अपने सिद्धान्त को प्रतिपादित किया था। प्रश्नोपनिषद् पर लिखे उनके भाष्य का हिन्दी अनुवाद 'विवेक-ज्योति' के पूर्व-सम्पादक स्वामी विदेहात्मानन्द जी द्वारा किया गया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' के पाठकों हेतु प्रस्तुत किया जा रहा है। –सं.)

भाष्य – स तृतीय-मात्रा-रूपः तेजसि सूर्ये सम्पन्नो भवति ध्यायमानो मृतोऽपि सूर्यात् सोमलोकाद्-इव न पुनरावर्तते किन्तु सूर्ये सम्पन्न-मात्र एव।

भाष्यार्थ – वह ध्यान करता हुआ मृत हो जाने पर भी तृतीय मात्रा रूप सूर्य को प्राप्त हो जाता है; वह चन्द्रलोक के समान सूर्यलोक से वापस नहीं आता, सूर्य में ही स्थित हो जाता है।

भाष्य – यथा पादोदरः सर्पः त्वचा विनिर्मुच्यते जीर्ण-त्वग्-विनिर्मुक्तः स पुनर्नवो भवति। एवं ह वै एष यथा दृष्टान्तः स पाप्मना सर्प-त्वक्-स्थानीयेन अशुद्धि-रूपेण विनिर्मुक्तः सामभिः तृतीय-मात्रा-रूपैः ऊर्ध्वम् उन्नीयते ब्रह्मलोकं हिरण्यगर्भस्य ब्रह्मणो लोकं सत्य-आख्यम्।

भाष्यार्थ – जैसे सर्प अपनी केंचुली को त्यागकर, अपनी पुरानी त्वचा से मुक्त होकर एक बार फिर नवीन हो जाता है; उसी प्रकार, जैसाकि यह दृष्टान्त है, वह सर्प की केंचुली के समान अपने अशुद्धि रूपी पापों से मुक्त होकर, तृतीय मात्रा रूपी सामवेद के मंत्रों द्वारा ऊपर की ओर 'सत्यलोक' नामक हिरण्यगर्भ अर्थात् ब्रह्मा के ब्रह्मलोक में उन्नीत किया जाता है।

भाष्य – सः हिरण्यगर्भः सर्वेषां संसारिणां जीवानाम् आत्मभूतः। स हि अन्तरात्मा लिङ्गरूपेण सर्वभूतानां तस्मिन् हि लिङ्गात्मनि संहताः सर्वे जीवाः। तस्मात् स जीवघनः। सः विद्वान् त्रिमात्रा-ओंकार-अभिज्ञ एतस्मात् जीव-घनात् हिरण्यगर्भात् परात्-परम् परमात्मा आख्यं पुरुषमीक्षते पुरिशयं सर्व-शरीर-अनुप्रविष्टं पश्यति ध्यायमानः। तद्-एतस्मिन् यथोक्त-अर्थ-प्रकाशकौ मन्त्रौ भवतः।।५।।

भाष्यार्थ – वह हिरण्यगर्भ समस्त संसारी (आवागमनशील) प्राणियों की (समष्टि होने के कारण) उनकी अन्तरात्मा-स्वरूप है। वह अन्तरात्मा ही समस्त जीवों के लिंग अर्थात् सूक्ष्म शरीर के रूप में उनमें स्थित रहकर सभी प्राणियों को एक साथ जोड़े रखता है, इसीलिये वह जीवघन अर्थात् सभी जीवों की समष्टि है। जो ज्ञाता तीन मात्राओं से युक्त ओंकार को जानता है, वह इन जीवघन हिरण्यगर्भ के परे परमात्मा नामक पुरि अर्थात् पूरे शरीर में व्याप्त पुरुष को ध्यान के द्वारा देखता है। अगले दो मन्त्र उपरोक्त तात्पर्य को ही प्रकट करनेवाले हैं।। ।।५/५।। **(क्रमशः)**

रामकृष्ण बोलो

मोहन सिंह मनराल

प्राण अनन्तगत कलि में रामकृष्ण बोलो,
रामकृष्ण रामकृष्ण रामकृष्ण बोलो।
सुबह-शाम हरि का नाम गा के मस्त होलो,
रामकृष्ण रामकृष्ण रामकृष्ण बोलो ।। प्राण ....
क्या ले के आया जग में क्या ले के जाना,
जीवन है थोड़ा फिर क्यों व्यर्थ है गँवाना,
जीवन है अनमोल तराजू ले तोलो।
रामकृष्ण रामकृष्ण रामकृष्ण बोलो ।।प्राण ...
जप नहिं ध्यान नहिं त्याग-तपस्या नहिं,
दान नहिं पुण्य नहिं सेवा सद-इच्छा नहिं,
रामकृष्ण नाम गा के मन का मैल धोलो।
रामकृष्ण रामकृष्ण रामकृष्ण बोलो ।।प्राण ...
फैल रहा मन चारों ओर क्यों सोचो,
लगता नहिं भजन में बार-बार खोजो,
रामकृष्ण नाम मिस्त्री मन में घोलो।
रामकृष्ण रामकृष्ण रामकृष्ण बोलो ।। प्राण ....
नाम का प्रताप कलि में है बड़ा भारी,
रामकृष्ण नाम अविद्या हर लेता सारी,
रामकृष्ण करुणा-वारि तन-मन भिगो लो।
रामकृष्ण रामकृष्ण रामकृष्ण बोलो ।। प्राण ....

सारगाछी की स्मृतियाँ (१३६)

स्वामी सुहितानन्द

(स्वामी सुहितानन्द जी महाराज रामकृष्ण मठ-मिशन के उपाध्यक्ष हैं। महाराजजी जगजननी श्रीमाँ सारदा देवी के शिष्य स्वामी प्रेमेशानन्द जी महाराज के अनन्य निष्ठावान सेवक थे। उन्होंने समय-समय पर महाराजजी के साथ हुए वार्तालापों के कुछ अंश अपनी डायरी में गोपनीय ढंग से लिखकर रखा था, जो साधकों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। 'उद्बोधन' बँगला मासिक पत्रिका में यह मई-२०१२ से २०२२ तक अनवरत प्रकाशित हुआ था। पूज्य उपाध्यक्ष महाराज की अनुमति से इसका अनुवाद रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द आश्रम, रायपुर के स्वामी प्रपत्त्यानन्द और वाराणसी के रामकुमार गौड़ ने किया है, जिसे 'विवेक-ज्योति' में क्रमश: प्रकाशित किया जा रहा है। – सं.)

३०-०९-१९६६

रामकृष्ण संघ के परमाध्यक्ष पूज्यपाद प्रभु महाराज मोटर गाड़ी से अद्वैत आश्रम के प्रवेश द्वार पर उतरे, साथ में भरत महाराज हैं। तदुपरान्त ठाकुर को प्रणामादि करके सीधे प्रेमेश महाराज के कक्ष में आए। तख्त के पास तकिया रखा था और एक छोटी गद्दी उनके लिए रखी थी। वे आकर गद्दी पर न बैठकर उकड़ूँ ही जमीन पर बैठ गए और बोले – 'कैसे हैं?' सेवक द्वारा परिचय दिए जाने पर प्रेमेश महाराज ने कहा – ''महाराज, प्रणाम करूँगा, चरण कहाँ हैं?

प्रभु महाराज – वह सब आवश्यक नहीं है।

प्रेमेश महाराज – दीक्षा कहाँ देंगे?

प्रभु महाराज – इन लोगों ने कहीं ठीक किया है।

प्रेमेश महाराज – काशी में न? क्यों काशी में तो स्वामीजी के कक्ष में विशुद्धानन्द जी महाराज ने दिया था।

०२-१०-१९६६

सेवक – महाराज, प्रेसीडेन्ट महाराज आए हैं।

प्रेमेश महाराज – महाराज, थोड़ी पदधूलि दीजिए। (हाथ बढ़ाकर) चरण कहाँ हैं?

प्रभु महाराज – आप अब क्या पदधूलि लेंगे?

प्रेमेश महाराज – अरे, थोड़ी दीजिए न पदधूलि !

प्रभु महाराज के हाथ बढ़ा देने पर प्रेमेश महाराज ने स्पर्श किया।

प्रेमेश महाराज – प्रेसीडेन्ट को तो हमलोग ठाकुर की प्रतिमा समझते हैं – ठीक जैसे दुर्गापूजा की प्रतिमा होती है।

प्रभु महाराज – आपने तो पत्र में वही लिखा था।

प्रेमेश महाराज – हाँ, वह ठीक है। वही समझता हूँ। मैं तो आँखों से देख नहीं पाता, चल-फिर नहीं पाता, दाहिना हाथ चलता नहीं, कानों से कम सुन पाता हूँ। बायाँ हाथ थोड़ा चलता है। आँखों से तो दर्शन हुआ नहीं, किन्तु आपका कंठ-स्वर थोड़ा सुन सका, फिर भी स्पर्श तो हुआ।

प्रभु महाराज – (सहास्य) एक कुछ होने से ही हुआ।

प्रेमेश महाराज – आप मंगलगिरि से मिलकर आ गए?

प्रभु महाराज – हाँ।

प्रेमेश महाराज – क्या वे चल-फिर पाते हैं? आँखों से देख पाते हैं?

प्रभु महाराज – अथर्व ने चरणों पर लगकर प्रणाम किया। आँखों से देख पाते हैं, बातें भी कर लेते हैं।

प्रेमेश महाराज – महाराज, यही हम लोगों की अन्तिम भेंट है।

प्रभु महाराज – देखता हूँ, कल यदि समय मिला, तो एक बार पुन: आऊँगा।

प्रेमेश महाराज – चरणों की धूलि तो आपने दी नहीं, फिर भी आप के मुख से इतना ही सुनकर सान्त्वना पाऊँगा कि 'मैंने पद धूलि दे दी।' अब तो आप भोजन करने जाएँगे।

प्रभु महाराज – अभी ठाकुर का भोग नहीं हुआ है।

प्रेमेश महाराज – आप अद्वैत आश्रम में प्रसाद पाएँगे?

प्रभु महाराज – मैं अपने कक्ष में ही खाता हूँ – वहाँ ही भोजन प्रसाद पहुँच जाएगा। (सेवक से) इनका स्नान हो गया? भोजन कर चुके हैं?

सेवक – स्नान हो गया है, बाद में भोजन करेंगे।

प्रेमेश महाराज – अब आप भोजन करने जा रहे हैं।

प्रभु महाराज – अच्छा, अब मैं चलता हूँ।

२०-११-१९६६

सेवक – अच्छा महाराज, आप इस समय ठाकुर का स्मरण कर लेते हैं।

महाराज – हाँ, कर लेता हूँ।

सेवक – जब बेहोश जैसे प्रतीत होते हैं, क्या तब भी चिन्तन करते हैं?

महाराज – हाँ, तब भी ठाकुर का चिन्तन ही करता हूँ।

सेवक – क्या? ठाकुर की मूर्ति का चिन्तन?

महाराज – हाँ।

सेवक – माँ का चिन्तन नहीं करते हैं?

महाराज – (थोड़ी देर मौन रहकर) 'करता हूँ'।

सेवक – क्या आपको बातें करने में कष्ट होता है?

महाराज – हाँ, होता है।

२३-१२-१९६६

सेवक – महाराज, जो लोग कामकाज नहीं करते, उनको ही रोग-कष्ट अधिक है। जैसे आप, शान्तानन्द महाराज, गुरुदास महाराज। इसके अलावा साधारण साधु लोग तो हैं ही।

महाराज – नहीं, वैसा क्यों? रोग प्रत्येक के अपने-अपने कर्मवश होता है। इसके अलावा, सबकी कर्मों के प्रति प्रवणता एक समान नहीं होती। कर्मत्याग करके, जप-ध्यान, पूजा-पाठ छोड़कर आलस्यपूर्वक समय बिताने से पाप लगता है। तब देह पर दुख-भोग हो सकता है।

सेवक – मेरी तो कर्मों की ओर प्रवणता है।

महाराज – तुम्हारी परोपकार-प्रवृत्ति है।

सेवक – इसे घटाने का प्रयास करना क्या अच्छा है?

महाराज – घटाने-बढ़ाने की कोई बात नहीं, इसे इस तरह उन्मुख करना होगा, जिससे यह ठाकुर की ओर जाए। ज्ञान-कर्म-भक्ति-योग समन्वित साधना। मेरी सब साधना थी। मन शीघ्र ही एकाग्र हो जाता है, समाधि होना असम्भव नहीं, किन्तु शरीर की इस अवस्था के कारण ध्यान और समाधि नहीं होती।

२४-१२-१९६६

इस समय महाराज के शरीर की दशा का ठीक से वर्णन कर पाना असम्भव है। इतना कष्ट है, किन्तु चुपचाप पड़े रहते हैं। कभी कोई बात पूछने पर या तो उत्तर देते हैं, या चुपचाप रहते हैं। कुछ समय पहले 'माँ की बातें', 'श्रीरामकृष्ण-लीलाप्रसंग' से पाठ करने को कहते थे, किन्तु अब पाठ हो या न हो, वे चुपचाप रहते हैं। उनकी इस अन्तर्मुखी अवस्था को समझने की क्षमता सेवक में नहीं थी। महाराज की कोई सक्रिय भूमिका नहीं थी, फिर भी उनकी शारीरिक सेवा चलाते रहना बहुत कुछ मूर्ति की सेवा करने जैसा था।

२८-१२-१९६६

सेवक – महाराज ! ब्रह्मचर्यवान किन्तु इस जगत को सर्वस्व समझनेवाले तथा ब्रह्मचर्य-रक्षण में असमर्थ किन्तु भगवन्मुखी इन दोनों में से कौन अच्छा है?

महाराज – ब्रह्मचर्यवान और भगवन्मुखी रहने से अच्छा है। किन्तु इस जगत् को सर्वस्व समझने वाला घोर स्वार्थपरायण होता है। वह अपने स्वार्थ के लिए सब कुछ कर सकता है – माता-पिता, भाई-बहन सबके दायित्व से बच सकता है, उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। किन्तु जो भगवन्मुखी है, उसका भगवत्-विश्वास ही ब्रह्मचर्य-रक्षा में उसकी सहायता करेगा। **(क्रमशः)**

जब भगवान ने तुम्हें संसार में रखा है तो तुम क्या कर सकते हो? सब कुछ उन्हीं के ऊपर छोड़ दो। उनके चरणों में अपने को समर्पित कर दो। ऐसा करने पर फिर कोई कष्ट नहीं रह जाएगा। तब तुम देखोगे कि सब कुछ भगवान ही कर रहे हैं। सभी कुछ राम ही की इच्छा पर निर्भर करता है।

जब अहं मर जाता है तब सारे क्लेश मिट जाते हैं। तुम हजार तर्क विचार करो, पर अहं नहीं जाता। हमारे जैसे लोगों के लिए 'मैं भगवान का भक्त हूँ' यह भाव रखना अच्छा है। – श्रीरामकृष्ण देव

साधुओं के पावन प्रसंग (६२)

स्वामी प्रभवानन्द

स्वामी चेतनानन्द

(स्वामी चेतनानन्द जी महाराज से रामकृष्ण संघ के भक्त भलीभाँति परिचित हैं। वर्तमान में महाराज वेदान्त सोसायटी, सेंट लुइस के मिनिस्टर-इन-चार्ज हैं। उन्होंने श्रीरामकृष्ण, श्रीमाँ सारदा, स्वामी विवेकानन्द और वेदान्त पर अनेक पुस्तकें लिखी और अनुवाद की हैं। प्रस्तुत पुस्तक में रामकृष्ण संघ के महान त्यागी संन्यासियों के संस्मरण हैं, जिनके सम्पर्क में लेखक स्वयं आए थे। 'विवेक ज्योति' के पाठकों हेतु मूल बंगला से इसका हिन्दी अनुवाद धारावाहिक रूप से दिया जा रहा है। – सं.)

स्वामी प्रभवानन्द जी महाराज ने मुझसे कहा था कि कैसे हॉलीवूड केन्द्र जागृत हुआ। महाराज ने मुझसे कहा था, ''उन दिनों (१९४० और १९५० के दशक में) बहुत लोग नहीं आते थे। मैं उस समय गीता, उपनिषद्, भागवत, योगसूत्र, विवेकचूडामणि जैसे पुस्तकों का अनुवाद तथा 'Vedanta and the West' पत्रिका आरम्भ किया। गेराल्ड हर्ड, ऐलडस हक्सले और क्रिस्टोफर ईशरवूड आये। गेराल्ड के साथ १९४९ ई. में मेरी भेंट हुई। वह ऐलडस और क्रिस को लेकर आया। वे लोग युद्धविरोधी थे। क्रिस मेरे लेख को संशोधित करता था। गेराल्ड जब हॉलीवूड के मन्दिर में प्रवचन देता था, तब श्रोता उमड़ पड़ते थे। जॉन येल (स्वामी विद्यात्मानन्द) ने Vedanta Press and Book shop के लिए बहुत परिश्रम किया है। वे भी पत्रिका के प्रमुख सम्पादक थे। प्रभवानन्दजी ने बहुत अमेरिकावासियों को दीक्षा दी है। १९६० से महाराज की जीवन-सन्ध्या तक हॉलीवूड केन्द्र के ऊपर मध्याह्न सूर्य जैसा था। १९७१ ई. में जब मैं आया उस समय भी बहुत दबदबा था। प्रवचनकाल में मन्दिर भर जाता था और तीन जगह close circuit television लगाया गया था, जिससे श्रोतागण देख और सुन सकें। ये सभी प्राय: अमेरिकावासी थे। महाराज को ये लोग बहुत श्रद्धा और सम्मान करते थे। महाराज ने एक दिन मुझसे कहा था, यहाँ पर मेरे साथ कुता जैसा व्यवहार किया गया है और पुन: मैं यहाँ पर देवता जैसा पूजा भी गया हूँ।

वेदान्त सोसायटी ऑफ सर्दन कैलिफोर्निया के विस्तार के सम्बन्ध में बताया था कि उन्होंने १९४४ ई. में मि. स्पेंसर केलॉग के पास से सान्टा बारबरा में ८० एकड़ जमीन और १० हजार डॉलर प्राप्त किया था। मि. केलॉग ने उनसे दीक्षा प्राप्त की। तत्पश्चात् मि. केलॉग की मृत्यु हो गयी। वह एक धनी व्यापारी थे। तदुपरान्त सान्टा बारबरा कॉन्वेन्ट की स्थापना हुई। १९५६ ई. में यहाँ पर मन्दिर प्रतिष्ठा के समय स्वामी माधवानन्द और स्वामी निर्वाणानन्द जी महाराज आये थे।

गेराल्ड हर्ड ब्रिटिश थे। वे अमेरिका में निवास करने लगे थे। ये विश्व के एक विख्यात वक्ता थे। मध्ययुग में क्रिश्चन संन्यासी जिस प्रकार वास करते थे, इसी प्रकार गेराल्ड ने ३०० एकड़ जमीन पर ट्रैबूको कॉलेज की स्थापना की। वैदिक ऋषि जिस प्रकार गिरि-गुफा में ध्यान करते थे, उसी प्रकार सुन्दर एक गोलाकार dome shrine का निर्माण हुआ। भीतर में अन्धकार था और दो-तीन बिल था। जो आसन पर बैठकर ध्यान नहीं कर पाते थे, वे लोग पैर नीचे लटकाकर ध्यान करते थे। बाद में बीच के गर्त को थोड़ा-सा ऊँचा किया गया। जो भी हो, गेराल्ड ने १९४९ ई. में यह जमीन और ट्रबूको कॉलेज स्वामी प्रभवानन्द के हाथ में दे दिया और उन्होंने इसका नाम Ramakrishna Monastery दिया। अमेरिका में ट्रैबूको आश्रम ही मेरा प्रिय स्थान है। मैं इसको माया मुक्त जगह कहता था। सच कहता हूँ, साधन-भजन और अध्ययन के लिए इस प्रकार का अनुकूल जगह मैंने कभी भी नहीं देखा। अपूर्व वातावरण, बृहत् पुस्कालय, निर्जन, बहुत कम साधुओं का वास था। इस स्थान पर सात वर्ष तक मैंने जप-ध्यान, गवेषणा और अध्ययन तथा लिखने का कार्य किया है। इसके बीच में मेरा हॉलीवूड और सान्टा बारबरा में भी रहना हुआ था।

ट्रैबूको के सम्बन्ध में एक घटना बता रहा हूँ। १९७४ ई. में हॉलिवूड में कैन्वेन्ट बिल्डिंग बनाने की योजना हुई। पहले संन्यासिनियाँ कई जगहों पर रहती थीं। सब कुछ तैयार करने के लिए साढ़े तीन लाख डॉलर की आवश्यकता थी।

संन्यासिनियों के द्वारा प्रस्ताव आया कि ट्रैबूको मॉन्सटरी के सामने १३ एकड़ जमीन Orange County को ६६ हजार डॉलर में बिक्री किया जायेगा। वे लोग O'neil पार्क का विस्तार करेंगे।

१९७१ ई. में ट्रैबूको की सम्पत्ति का कर ५०० डॉलर था। दो वर्ष के बाद १४,५०० डॉलर कर हुआ। Orange County में जमीन की कीमत बढ़ गयी, जो भी हो County के साथ एक समझौता हुआ; हमलोग २५० एकड़ जमीन County को agricultural reserve के रूप में देंगे अर्थात् वहाँ पर कोई घर-निर्माण नहीं किया जा सकता। लोग वहाँ पैदल घूम सकते हैं या घोड़ा पर चढ़कर घूम सकते हैं। हमलोगों की सम्पत्ति O'neil पार्क से सटा हुआ है। बाकि ५० एकड़ जमीन करमुक्त रहेगा। आश्रम के शान्तिपूर्ण परिवेश की रक्षा के लिए यह समझौता किया गया। Orange County इससे सहमत हो गया।

अभी आश्रम के अन्दर प्रवेश करने पर १३ एकड़ जमीन की बिक्री का प्रस्ताव आने पर प्रभवानन्दजी बिक्री करने के लिए तैयार हुए। मैं उस समय सान्टा बारबरा में था। ब्रह्मचारी असीम बोर्ड का सदस्य था। उसने मुझे यह सब बातें बतायी और कहा, ''आपको छोड़कर और कोई प्रभवानन्दजी के मत को परिवर्तित नहीं कर सकता।'' जो हो, मैंने हॉलीवूड वापस आकर महाराज को कहा, ''महाराज, आपने क्या ट्रैबूको का १३ एकड़ जमीन बेचने का आदेश दिया है?'' ''हाँ, हमलोगों को कान्वेन्ट तैयार करने के लिए रुपये की आवश्यकता है।'' ''महाराज, आपके मुँह खोलने से लाख-लाख डॉलर आ जायेगा। माइकल वेरी ६७,००० डॉलर देने के लिए तैयार है। (माइकेल जेराल्ड का सेक्रटरी और हमलोग के साथ ट्रैबूको में रहता था।) आपने इसमें से २५० एकड़ Orange County को ट्रैबैको के आध्यात्मिक परिवेश की रक्षा के लिए तो दिये हैं; आप यदि आश्रम के भीतर जाने वाले रास्ता की सामने वाली जमीन बिक्री करते हैं, तो O'neil पार्क वहाँ पर बाथरूम और overnight camping place बनायेगा। अमेरिका के लड़का-लड़की जब camping में जाते हैं, तो उनके शरीर पर बहुत कम कपड़े रहते हैं। इसीलिए, वह सब दृश्य आश्रम का परिवेश नष्ट करेगा।'' मेरी युक्ति सुनकर महाराज ने साथ-ही-साथ मैनेजर अमोहानन्द को कहा, ''हमलोग जमीन-बिक्रय नहीं करेंगे। इस २५० एकड़ के लिए हमलोगों ने जो शर्त लागू की है, वह इस जमीन के लिए भी लागू करो।'' बस, सब बदल गया। रुपये के लिए कोई असुविधा नहीं हुई। जेरॉक्स के आविष्कारक मिस्टर चेस्टर कार्लसन की धर्मपत्नी ने एक लाख डॉलर दान दिया।

हॉलीवूड में मैं प्रत्येक दिन १०.३० बजे महाराज को देखने जाता था। तब उनके साथ विविध विषय पर बातें होती थीं। एक दिन वेदान्त के अधिकारीवाद को लेकर चर्चा हुई। उन्होंने कहा, ''देखो, अच्छा मनुष्य को अच्छा बनाने में कोई महानता नहीं है। खराब मनुष्य को अच्छा कर पाओ, तो उसमें महानता है। समझ के रखो, शुकदेव और नारद तुम्हारे पास वेदान्त सीखने के लिए नहीं आयेंगे। ये सब साधारण मनुष्य शान्ति और आनन्द के लिए हमलोगों के पास आते हैं। आध्यात्मिक सम्पदा और ठाकुर, श्रीमाँ, स्वामीजी की शिक्षा देकर इनलोगों की सहायता करना ही हमलोगों का कार्य है।''

२१/०६/१९७१ ई. को सान्टा बारबरा में दोपहर के समय महाराज ने कहा, ''मिस मैक्लाउड को जार्ज बर्नार्ड ने एक पोस्टकार्ड पर लिखा, तुमको और मुझे इस संसार में जीवित रहने का कोई अधिकार नहीं है, क्योंकि हमलोग बहुत भयावह दिखते हैं।

महाराज यदि कुछ नया बोलते, तो मैं कमरे में जाकर दैनन्दिनी में लिख लेता था।

१६/०२/१९७२, हॉलीवूड, श्रीरामकृष्ण जन्मतिथि

१९१४ ई. की घटना है। उस दिन ठाकुर की जन्मतिथि थी। पुलिन मित्र स्वामीजी के शिष्य थे। वे बहुत अच्छा वीणा बजाते थे। उस दिन वे वीणा बजा रहे थे और महाराज तन्मय होकर सुन रहे थे। उन्होंने भाव में ही देखा कि वीणा ठाकुर के शरीर को छू रहा है, इसीलिए उन्होंने उनको थोड़ा-सा खिसककर बैठने के लिए कहा।

०१/०३/१९७२ ई. हॉलीवूड

बेलूड़ मठ में महापुरुष महाराज एक दिन अपने एक शिष्य को उनके कमरे में प्रवेश करते ही प्रणाम करने जा रहे थे।

शिष्य – महाराज आप क्या कर रहे हैं? मैं आपका शिष्य हूँ।

महापुरुष महाराज – सर्वप्रथम मैं भगवान को देखता हूँ; तत्पश्चात् मनुष्य देखता हूँ। **(क्रमशः)**

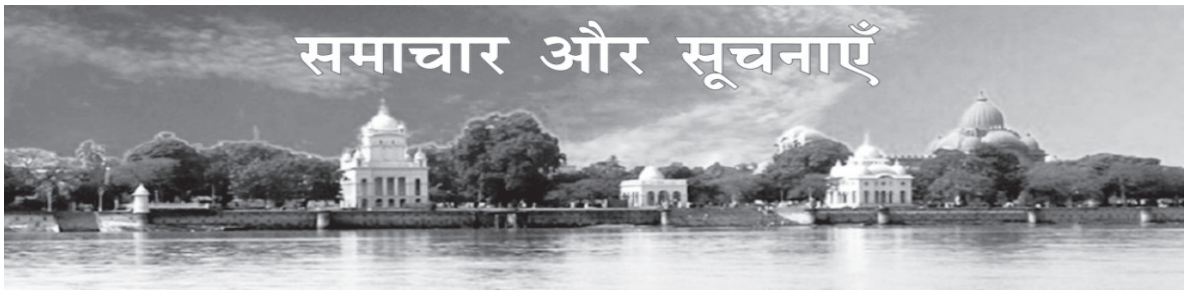

रामकृष्ण मिशन की ११४वीं वार्षिक साधारण सभा

रामकृष्ण मिशन की ११४वीं वार्षिक साधारण सभा रविवार, दिनांक १७ दिसम्बर, २०२३ को ३ बजकर ३० मिनट पर बेलूड़ मठ में आयोजित हुई, जिसमें रामकृष्ण मठ एवं रामकृष्ण मिशन के महासचिव स्वामी सुवीरानन्द जी महाराज द्वारा वित्तीय वर्ष २०२२-२३ में संस्था के कार्यों की रामकृष्ण मिशन की संचालन समिति की रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी। रिपोर्ट का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है :

१. पुरस्कार एवं सम्मान

(क) गाँधी स्मारक संग्रहालय, बैरकपुर, जिला-उत्तर २४-परगना, कोलकाता द्वारा रामकृष्ण मठ एवं मिशन द्वारा किये जा रहे सराहनीय सेवाकार्यों के लिये 'महात्मा गाँधी स्मृति पुरस्कार' से सम्मानित किया गया ।

(ख) नेशनल एसेसमेंट एवं एक्रिडिटेशन कौंसिल (NAAC) द्वारा विवेकानन्द सेंनेटरी कॉलेज, रहड़ा, कोलकाता को A++ ग्रेड एवं कॉलेज ऑफ आर्ट्स एंड साइन्स तथा मारुती कॉलेज ऑफ फिजिकल एजुकेशन, कोयम्बटूर को A+ ग्रेड, पाँच सालों के लिये प्रदान किया गया।

(ग) नेशनल इंस्टिट्यूशनल रैंकिंग फ्रेमवर्क (NIRF) शिक्षा मंत्रालय भारत सरकार द्वारा प्रदत्त राष्ट्रीय वरीयता सूची में रामकृष्ण मिशन के चार स्नातकीय कॉलेज को उल्लेखनीय वरीयता प्रदान की गयी – विद्यामन्दिर (सारदापीठ, बेलूड़) १५वाँ स्थान, विवेकानन्द सेंनेटरी कॉलेज (रहड़ा, कोलकाता) ८वाँ स्थान, आवासीय कॉलेज (नरेन्द्रपुर, कोलकाता) १९वाँ स्थान और आर्ट्स एवं साइंस कॉलेज (कोयम्बटूर) ७१वाँ स्थान।

(घ) नरेन्द्रपुर (कोलकाता) ऑफ कैम्पस सेन्टर, रामकृष्ण मिशन विवेकानन्द एजुकेशनल एंड रिसर्च इंस्टिट्यूट (डीम्ड युनिवर्सिटी) बेलूड़, हावड़ा, पश्चिम बंगाल को इंडियन कौंसिल ऑफ एग्रीकल्चरल रिसर्च (RKMVERI) इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ फार्मिंग सिस्टम रिसर्च, मोदीपुरम् मेरठ द्वारा 'बेस्ट सेन्टर ऑफ ऑल इण्डिया नेटवर्क प्रोग्राम आन ऑरगैनिक फार्मिंग'' – अखिल भारतीय जैविक खेती नेटवर्क प्रोग्राम को सर्वश्रेष्ठ केन्द्र घोषित किया गया।

(च) रामकृष्ण मिशन विद्यालय, नरेन्द्रपुर, कोलकाता के एक विद्यार्थी ने पश्चिम बंगाल उच्च माध्यमिक शिक्षा कौंसिल की उच्च माध्यमिक परीक्षा में राज्य में प्रथम स्थान (९९.२%) प्राप्त किया।

(छ) विद्यालय शिक्षा एवं साक्षरता विभाग, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, मालदा (पश्चिम बंगाल) को स्वच्छ विद्यालय पुरस्कार (जिला स्तरीय सम्मान) प्रदान किया गया।

(ज) ब्लांइड बॉयज एकेडमी, नरेन्द्रपुर, कोलकाता को ब्रेल प्रेस के लिये विकलांगों के सशक्तिकरण हेतु राजकीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

(झ) विवेकानन्द नेत्रालय, देहरादून को एन्ट्री लेवेल- स्माल हेल्थकेयर प्रोग्राम के अन्तर्गत २ वर्षों के लिए NABH सर्टिफिकेट प्रदान किया गया।

(ञ) मैसूर आश्रम को सराहनीय सेवा कार्य के लिये अमृत महोत्सव राजकीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

२. नवीन केन्द्र

(अ) रामकृष्ण मिशन की नवीन शाखा का शुभारम्भ साहुडंगी हाट, जिला - जलपाइगुड़ी, पश्चिम बंगाल में हुआ।

(ब) रामकृष्ण मठ की नवीन शाखा का शुभारम्भ भुज (गुजरात), चेंगम (तमिलनाडु) एवं यादाद्री भुवनगिरी (तेलांगाना) में किया गया।

३. भारत में गतिविधियाँ

रामकृष्ण मिशन एवं रामकृष्ण मठ ने अपने २२४ भारतीय केन्द्रों एवं उप-केन्द्रों के माध्यम से निम्नलिखित सेवाकार्यों में कुल ११७१.६१ करोड़ व्यय किये –

सेवा क्षेत्र	लाभार्थियों की संख्या (लाखों में)	व्यय राशि (रु. करोड़ में)
राहत एवं बचाव कार्य	५.३१	७.४६
सामान्य जन-कल्याण	३८.७५	२८.४२
चिकित्सा	८६.३०	४१२.०८
शैक्षणिक	३.०८	५९४.५३
ग्रामीण विकास	७०.६७	१०१.५४
साहित्य प्रकाशन		२७.५८
		कुल - ११७१.६१

४. भारत के बाहर विदेश में गतिविधियाँ

(अ) बांग्लादेश के बलियाती केन्द्र में नवीन श्रीरामकृष्ण मन्दिर में प्राण प्रतिष्ठा की गयी।

(ब) अमेरिका के शिकागो केन्द्र द्वारा शिकागो में 'होम ऑफ हारमोनी' नामक इकाई का शुभारम्भ किया गया।

(स) श्रीलंका सरकार के हिन्दू धर्म एवं सांस्कृतिक विभाग द्वारा दो रविवारीय विद्यालयों कोलंबो एवं बाटीकोला को सर्वश्रेष्ठ धार्मिक विद्यालय पुरस्कार प्रदान किया गया।

(द) रामकृष्ण मिशन एवं रामकृष्ण मठ के द्वारा २४ देशों में स्थित अपने ९६ केन्द्रों एवं उपकेन्द्रों के द्वारा विभिन्न प्रकार के सेवाकार्य किये गये।

हम सभी सदस्यों, शुभचिन्तकों एवं भक्तों को रामकृष्ण मिशन एवं रामकृष्ण मठ के सेवाकार्य में दिये गये सहयोग हेतु धन्यवाद ज्ञापित करते हैं।

(स्वामी सुवीरानन्द)
महासचिव

१७, दिसम्बर २०२३